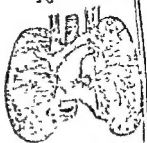


गर्भाशयका चित्र

वृक्कुम (किडनी)

श्वेत (प्लीहा)
प्रदर्शक चित्र

मनस गर्भाशय चित्र



मातृशरीर

मनस वृक्कुम चित्र

शुक्रवर्णिका दिव

भूषणमिति प्रदर्शक

दिव



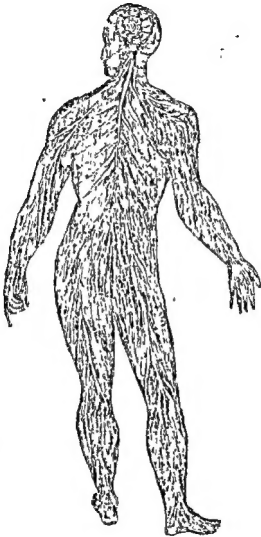
शुक्रवर्णिका दिव

शुक्रवर्णिका दिव



शुक्रवर्णिका दिव





सायु मर्दनांक दिवः

अनुक्रमणिका.

| विषय. | पृष्ठ. | विषय. | पृष्ठ. |
|----------------------------|--------|-------------------------|--------|
| मंगलाचरणम् | १ | कफपित्तनाडीगतिः | १४ |
| लोलाक्ष्याःप्रश्नः | २ | अन्यपतेस्थानपरत्वेन | |
| कवेरुत्तरम् | ३ | स्फुटाद्वृद्धजगतिः | १४ |
| नाडीदेवता | ३ | ज्वरकामादिनाडीगतिः | १५ |
| नाडीज्ञानयोग्यवैद्यः | ४ | सन्निपातनाडी. | १६ |
| नाडीज्ञानायोग्यवैद्यः | ४ | साध्यनाडी | १६ |
| नाडीद्रष्टुयोग्यरोगी | ५ | असाध्यनाडी.... | १७ |
| नाडीद्रष्टुमयोग्यरोगी | ५ | असाध्यापिगतिवशात् | |
| स्त्रीपुरुषनाडीज्ञानेभेदः | ५ | साध्या. | २१ |
| स्त्रीपुंसोर्नाडीभेदेकारणं | ६ | भारमवाहादिनाडी | २१ |
| नाडीस्पर्शनविधिः | ७ | भूतावेशादिनाडी | २२ |
| नाड्यादौपस्थानानि | ८ | असाध्यचिन्हेपिसाध्या | २२ |
| स्वस्थस्यनाडीलक्षणं | १० | आहारनाडीगतिः | २३ |
| वातादिनाडीगतिः | ११ | मैथुनांतादिनाडी | २५ |
| वातनाडीगतिः | ११ | अजीर्णनाडीगतिः | २५ |
| पित्तनाडीगतिः | ११ | प्रमेहप्रदरादिनाडी | २५ |
| कफनाडीगतिः | १२ | मर्तांतरेणस्वस्थनाडी- | |
| वातपित्तनाडीगतिः | १२ | गतिः | २६ |
| वातकफनाडीगतिः | १२ | नाडीगतिकारणं | २७ |
| कफपित्तनाडीगतिः | १३ | नाडीज्ञानावश्यकता | २९ |
| अन्यरीत्यागतिः | १३ | नाडीज्ञानप्राप्तिः | ३० |
| वातपित्तनाडीगतिः | १३ | नाडीज्ञानप्राप्तिकारणं | ३० |
| वातकफनाडीगतिः | १३ | ग्रंथकर्तुःपरंपरा. | ३० |

| विषय. | पृष्ठ. | विषय. | पृष्ठ. |
|-----------------------------|--------|--------------------------|--------|
| मंगलाचरणं | ३१ | नागदोषशान्तिः | ५६ |
| कविमियाप्रश्नः | ३३ | नागानुपानम् | ५६ |
| कवेरुत्तरं | ३३ | नागेश्वरानुपानं | ५७ |
| सप्तधातुनाम. | ३४ | वंगविधिःशोधनंच | ५७ |
| कांस्थपित्तलोत्पत्तिः | ३४ | वंगमारणं | ५८ |
| धातुशोधनम् | ३४ | वंगेश्वरविधिः | ५९ |
| स्वर्णशुद्धिः .. | ३५ | वंगगुणाः | ५९ |
| स्वर्णमारणं | ३६ | वंगेश्वरगुणाः | ६० |
| स्वर्णभस्मगुणाः ... | ३८ | अपक्वदोषाः | ६० |
| अपक्वस्वर्णदोषाः | ३८ | वंगदोषशान्तिः.... | ६० |
| स्वर्णविकारशान्तिः .. | ३९ | वंगानुपानानि | ६१ |
| अनुपानानि | ३९ | जसदविधिःशुद्धिश्च | ६४ |
| रौप्यविधिःशुद्धिश्च. | ४० | जसदमारणम् | ६४ |
| रौप्यमारणं | ४१ | जसदगुणाः .. | ६५ |
| रौप्यगुणाः | ४३ | अपक्वदोषाः | ६६ |
| अपक्वरौप्यदोषाः | ४४ | जसदविकारशान्तिः | ६६ |
| रौप्यविकारशान्तिः | ४४ | जसदानुपानं | ६६ |
| रौप्यानुपानानि | ४४ | लोहायधिः | ६८ |
| ताम्रविधिःशुद्धिश्च | ४५ | लोहपरीक्षाशुद्धिश्च | ६८ |
| ताम्रमारणं .. | ४८ | लोहमारणं | ६९ |
| ताम्रभस्मगुणाः | ५० | लोहगुणाः | ७१ |
| अपक्वताम्रदोषाःशान्तिश्च ५१ | ५१ | अपक्वदोषाः | ७२ |
| अनुपानं | ५२ | लोहविकारशान्तिः | ७३ |
| नागविधिःशोधनंच ... | ५२ | लोहकरणेमंत्रः | ७३ |
| नागमारणम् | ५३ | लोहानुपानानि | ७४ |
| नागेश्वरविधिः | ५५ | मंदूरविधिगुणाश्च. | ७५ |
| सामान्यगुणाः | ५५ | धातुसेविनोवर्ज्यानि | ७६ |
| अपक्वदोषाः | ५६ | प्रथमारीचिः | ७७ |

| विषय | पृष्ठ. | विषय | पृष्ठ |
|--------------------------|--------|------------------------|-------|
| अथोपधातुविधिस्तत्रसंख्या | | अभ्रकानुपानानि | ९९ |
| स्वर्णमाक्षिकशोधनं | ७७ | मनःशिलाशोधनम् | १०३ |
| स्वर्णमाक्षिकमारण | ७७ | मनःशिलागुणाः | १०४ |
| स्वर्णमाक्षिकगुणाः | ७८ | मनःशिलानुपान | १०४ |
| अपक्वदोषाः | ७९ | अशुद्धदोषास्तच्छातिश्च | १०६ |
| माक्षिकविकारशातिः | ८० | खर्परशुद्धिः | १०७ |
| माक्षिकानुपान | ८० | खर्परगुणाः | १०७ |
| रौप्यमाक्षिकविधिः | ८० | अशुद्धदोषास्तच्छातिः | १०७ |
| तुत्थविधिः | ८० | खर्परानुपानानि | १०७ |
| तुत्थगुणदोषौ | ८१ | द्वितीयावचीचिः | १०८ |
| तुत्थविकारशातिः | ८१ | अथरसविधिः | १०९ |
| अनुपान | ८२ | पारदोत्पत्तिः | ११० |
| हरितालशोधनम् | ८२ | पारदस्यवर्णभेदाः | ११० |
| हरितालमारण | ८३ | पारदेस्वाभाविकदोषाः | १११ |
| हरितालगुणाः | ८३ | पारदशोधनम् | ११२ |
| अपक्वदोषाः | ८५ | रसजारणम् | ११५ |
| हरितालविकारशातिः | ८६ | पद्मगुणमधकजारणफल | ११६ |
| हरितालानुपानानि | ८६ | जारणमाहात्म्य | ११७ |
| नीलाजनविधिः | ८६ | पारदबुभुक्षितकरण | ११८ |
| अभ्रकविधिः | ९० | पारदमारण | १२० |
| अभ्रकजातिभेदाः | ९२ | पारदभस्मगुणाः | १२३ |
| अभ्रकशोधनम् | ९३ | पारदविकारशातिः | १२४ |
| अभ्रकमारण | ९४ | पारदानुपानम् | १२४ |
| अभ्रकभस्मगुणाः | ९५ | पारदसेविनःपथ्यापथ्य | १२८ |
| अपक्वदोषाः | ९८ | अथरसकर्पूरविधिः | १२९ |
| अभ्रकदोषशाति | ९९ | रसकर्पूरशोधनम् | १२९ |
| | ९९ | रसकर्पूरानुपानं | १३० |

| विषय. | पृष्ठ. | विषय. | पृष्ठ. |
|------------------------|--------|------------------------|--------|
| अशुद्धेदोषाः | १३१ | अश्विनीकुमारविधिः | १५५ |
| रसकर्पूरविकारशांतिः | १३१ | अश्विनीकुमारानुपा- | |
| रससिंदूरविधिः | १३२ | नानि | १५५ |
| रससिंदूरगुणाः | १३४ | पंचमीविधिः | १५८ |
| रससिंदूरदोषाः शांतिश्च | १३५ | अथरत्नादिविधिः | १५८ |
| रससिंदूरानुपानानि | १३५ | रत्नवर्णभेदाः | १५९ |
| तृतीयावीचिः | १३८ | रत्नगुणाः | १६१ |
| अथ गंधकविधिः | १३८ | अशुद्धेदुदोषाः ✓ | १६१ |
| गंधकशुद्धिः | १३९ | रत्नविकारशांतिः ✓ | १६२ |
| गंधकानुपानं | १३९ | रत्नानुपानानि ✓ | १६३ |
| गंधकविकारशांतिः | १४१ | प्रवालविधिरनुपानं च ✓ | १६३ |
| चतुर्थावीचिः | १४२ | पट्टीवीचिः | १६५ |
| अथोपरसविधिः | १४३ | अथौषधानुपानानि | १६५ |
| लोकनाथरसविधिः | १४३ | त्रिफलानुपानं ✓ | १६६ |
| लोकनाथानुपानानि | १४४ | गुह्यच्यनुपानं ✓ | १६६ |
| वाजिवर्माविधिरनुपा- | | सामान्यौषधानुपानानि | १६८ |
| नानि च | १४७ | कवेः कुलपरंपरावर्णनं | १७८ |

नाडीज्ञानतरंगिणी

प्रारंभः

श्रीर्जयति ॥ ॥ अथातोनाडीज्ञानतरंगिणीं
रचयिष्यामः ॥ नत्वाश्रीराघवंदेवंभूमिजा
रमणंहरिम् ॥ रचयाम्ययिलोलाक्षिनाडीज्ञा
नतरंगिणीम् ॥ १ ॥ ज्ञात्वाकालंवलंवाले
नृणामाधुनिकंवयः ॥ पराशरादिकर्षीणांवा
क्यैःसिद्धांतिनामपि ॥ २ ॥ नीरतीरादिरू
पैश्चस्वर्णरत्नादिकैर्यथा ॥ किरीटंभूमिपाला
नामहर्घैःसुषमाप्रदं ॥ ३ ॥

टीका—अथ शकुनज्ञानतरंगिणीरचनानंतर, नाडी-
ज्ञानतरंगिणी रचता हौं. तहां प्रथम निर्विघ्नसमाप्त्यर्थ
स्वइष्ट देव राघवजीको नमस्कार करिके मंगलाचरण
करता हौं. अथ श्लोकार्थ—हे लोलाक्षि, प्रथम भू-
मिपुत्री जो श्रीजानकीजी तिनके पति श्रीरघुकुलो-
त्पन्न रामचंद्र साक्षात् हरि भगवान्को नमस्कार
करिके औ उनकी कृपासँ इस समयका काल ओ
मनुष्योंका अवस्था औ बलको जानिके फिरि परा-

शरादि जे सिद्धांतके करनेवाले ऋषि तिनके वाक्य तेई जल औ किनाररूप हैं, तिनकरिके यह नाडी-ज्ञानतरंगिणी में रचता हौं जैसे अमौल्य स्वर्णरत्नादिकरिके राजाके परम शोभा देनेवाला, मुकुट रचते हैं तैसे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

चापल्यमेक्षामिष्यंतिविद्वांसोगतमत्सराः॥ मूर्खाणामत्सरवतांविरोधैःकाक्षतिर्मम ॥ ४ ॥

टीका—हे प्रिये, जे विद्वान् औ ईर्ष्यारहित हैं ते मेरी चपलताको क्षमा करें औ जे मूर्ख हैं ओ ईर्ष्या करनेवाले हैं तिनके विरोधसे मेरी क्या हानि हे याने कुछभी हानि नहीं हैं ॥ ४ ॥

लोलाक्षीपृच्छति॥वदभिषग्वरकंजविलोचन
पवनपित्तकफैर्धमनीगतिं॥तवमुखाब्जवचोऽ
मृतपानतोभवतिमेमनसिप्रवरंसुखं ॥ ५ ॥

टीका—लोलाक्षी पूछती हे हे वेद्यश्रेष्ठ, हे कमलनयन, वातपित्तकफकरिके जो जो नाडीकी गति होती हे सोई सोई कहो. तुम्हारे मुखरूप चंद्रमासें वचनरूप अमृतपान करनेसें मेरे मनमें परम सुख होता है॥५॥
केचिद्वातंवदंत्यादौकेचित्पित्तंभिषग्वराः॥निश्चितं ब्रूहिकश्चादौकोमध्येंऽतेचकःपृथक् ॥६॥

टीका—कितने विद्वान् वैद्य आदिमें बात कहते हैं. कितने पित्त कहते हैं, तहां आप निश्चै करिके कहौ की, कौन दोष आदिमें, औ कौन मध्यमें, औ कौन अंतमें है सो पृथक् पृथक् कहौ ॥ ६ ॥

केदेवाःसंतिनाडीनांकथंतांश्चपरीक्षयेत् ॥ अ
नाष्टृष्टचयत्किंचित्तदपिप्रवदप्रिय ॥ ७ ॥

टीका—हे प्रिय, बात, पित्त, कफ, इनकी नाडि-
योंके देवता कौन हैं और नाडीकी परीक्षा कैसे
करना ? औरभी जो मैंने न पूछा होई सोभी कहौ ॥ ७ ॥

रघुनाथप्रसादः ॥ अयिशृणुकुंजरगामिनि
कांतेऋषिवचनानिवदाम्यहमद्वा ॥ घनकु
चयुग्मवरेविधुवक्रमतिमतिबुद्धिमदात्मभवा
त्वम् ॥ ८ ॥

टीका—अयि कुंजरगामिनि हे कांते, तुम सुनौ.
मैं साक्षात् ऋषिनके वचन कहौंगा. हे घनकुचयु-
ग्मवरे, हे चंद्रवदने, हे बुद्धिमति, तुम बुद्धिवानकी
पुत्री हौ, इसवास्ते तुम प्रीतियुक्त सुनौ ॥ ८ ॥

श्रीश्रीनिवासतातार्यःसुप्रसन्नोमयिस्थितः ॥
रघुनाथप्रसादोऽपिकवित्वेतोऽश्रमक्षमः ॥ ९ ॥

शरादि जे सिद्धांतके करनेवाले ऋषि तिनके वाक्य तेई जल औ किनारेरूप हैं, तिनकरिके यह नाडी-ज्ञानतरंगिणी में रचता हौं जैसे अमोल्य स्वर्णरत्ना-दिकरिके राजोंके परम शोभा देनेवाला, मुकुट रचते हैं तैसे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

चापल्यंमेक्षमिष्यंतिविद्वांसोगतमत्सराः॥ मूर्खाणामत्सरवतांविरोधैःकाक्षतिर्मम ॥ ४ ॥

टीका—हे प्रिये, जे विद्वान् औ ईर्ष्यारहित हैं ते मेरी चपलताको क्षमा करें औ जे मूर्ख हैं ओ ईर्ष्या करनेवाले हैं तिनके विरोधसें मेरी क्या हानि है याने कुछभी हानि नहीं है ॥ ४ ॥

लोलाक्षीपृच्छति॥वदभिषग्वरकंजंविलोचनं
पवनपित्तकफैर्धमनीगतिं॥तवमुखाब्जवचोऽ
मृतपानतोभवतिमेमनसिप्रवरंसुखं ॥ ५ ॥

टीका—लोलाक्षी पूछती है हे वैद्यश्रेष्ठ, हे कमलनयन, यातपित्तकफकरिके जो जो नाडीकी गति होती है सोई सोई कहौ. तुम्हारे मुखरूप चंद्रमासें वचनरूप अमृतपान करनेसें मेरे मनमें परम सुख होता है॥५॥
केचिद्वातंवदंत्यादौकेचित्पित्तंभिषग्वराः॥निश्चितंब्रूहिकश्चादौकोमध्येंऽतेचकःपृथक् ॥६॥

टीका—कितने विद्वान् वैद्य आदिमें बात कहते हैं. कितने पित्त कहते हैं. तहां आप निश्चै करिके कहौ की, कौन दोष आदिमें, औ कौन मध्यमें, औ कौन अंतमें है सो पृथक् पृथक् कहौ ॥ ६ ॥

‘केदेवाःसन्तिनाडीनांकथंतांश्रपरीक्षयेत् ॥ अ
नाष्टं चयत्किंचित्तदपिप्रवदप्रिय ॥ ७ ॥

टीका—हे प्रिय, बात, पित्त, कफ, इनकी नाडि-
योंके देवता कौन हैं और नाडीकी परीक्षा कैसे
करना ? औरभी जो मैंने न पूछा होई सोभी कहौ ॥ ७ ॥

रघुनाथप्रसादः ॥ अयिशृणुकुंजरगामिनि
कांतेऋषिवचनानिवदाम्यहमद्वा ॥ घनकु
चयुग्मवरेविधुवक्रमतिमतिबुद्धिमदात्मभवा
त्वम् ॥ ८ ॥

टीका—अयि कुंजरगामिनि हे कांते, तुम सुनौ.
मैं साक्षात् ऋषिनके वचन कहौंगा, हे घनकुचयु-
ग्मवरे, हे चंद्रवदने, हे बुद्धिमति, तुम बुद्धिवानकी
पुत्री हौ, इसवास्ते तुम प्रीतियुक्त सुनौ ॥ ८ ॥

श्रीश्रीनिवासतातार्यःसुप्रसन्नोमयिस्थितः ॥
रघुनाथप्रसादोऽपिकवित्वेतोऽश्रमक्षमः ॥ ९ ॥

टीका—श्रीश्रीनिवास ताताचार्य, अतिप्रसन्न मेरे हृदयमें स्थित हैं; इसवास्ते मैं कवितामें विनाश्रम समर्थ हों. इहां केवल गुरुकृपामात्र समर्थताके कारण है. यह निश्चै जानो ॥ ९ ॥

वातिकायाःपतिर्ब्रह्मापैत्तिकाया
स्त्रिशूलधृक् ॥ श्लैष्मिकायाःपति
विष्णुर्वदंतीतिविपश्चितः ॥ १० ॥

टीका—वायूकी नाडीका देवता ब्रह्मा है, पित्तकी नाडीका शिव देवता है, कफकी नाडीका विष्णु देवता है ॥ १० ॥

अन्यच्च ॥ वातिकायाःपतिर्वायुःपैत्ति
कायादिवाकरः ॥ श्लैष्मिकायाःपति
श्वंद्रोवदंतीतिमुनीश्वराः ॥ ११ ॥

टीका—औरभी मुनीश्वर कहते हैं. वायूकी नाडीका वायु देवता है, पित्तकी नाडीका सूर्य है, कफकी नाडीका चंद्र है ॥ ११ ॥

अथनाडीज्ञानयोग्यवैद्यः ॥ स्थिरचित्तोनि
रोगश्चसुखासीनःप्रसन्नधीः ॥ नाडीज्ञान
समर्थःस्यादित्याहुःपरमर्षयः ॥ १२ ॥

टीका—स्थिरचित्त, निरोग, सुखसे बैठा हुआ, प्रसन्नबुद्धि ऐसा वैद्य नाडीज्ञानमें समर्थ होता है. ऐसे श्रेष्ठ ऋषि कहते हैं ॥ १२ ॥

अथनाडीज्ञानायोग्यवैद्यः ॥ पीतमद्यश्च
चलात्मामलमूत्रादिवेगयुक् ॥ नाडीज्ञानेऽ
समर्थः स्याल्लोभाक्रांतश्चकामुकः ॥ १३ ॥

टीका—अथ नाडीज्ञानमें असमर्थ वैद्य कहते हैं. जिसने मदिरा पियी होई, और जिसका मन चंचल होय, और जिसका मलमूत्रादि त्यागनेकी इच्छा होयरही है, औ जिसको लोभ अत्यंत होई औ कामकरिके पीडित होई सो वैद्य नाडीज्ञानमें असमर्थ है ॥ १३ ॥

अथनाडीद्रष्टुयोग्योरोगी ॥ त्यक्तमूत्रपुरीष
स्यसुखासीनस्यरोगिणः ॥ अंतर्जानुकरस्या
पिनाडीसम्यक्परीक्षयेत् ॥ १४ ॥

टीका—जो मल और मूत्र त्यागिके सुखसे बैठा होई औ दोनों जानूके बीचमें हाथ किये होई तिस रोगीकी नाडी अछी तरहसे परखना ॥ १४ ॥

अथनाडीद्रष्टुमयोग्यः ॥ सद्यःस्नातस्य

शुक्लस्य तथा तैलावगाहिनः ॥ श्रुतृपार्त
स्यनुतस्य नाडीमम्यङ्गनबुध्यते ॥ १५ ॥

टीका—जो तत्काल नान किया होय, वा भोजन किया होय, अथवा तेल मटन कगया होय, अथवा भूखापियात्ता होय अथवा सोना होई उसकी नाडी अच्छी तरहसे देग्बनेमें नहीं आनी है ॥ १५ ॥

अथ स्त्रीपुंसोर्नाडीज्ञानभेदमाह ॥ योपितो वा
मभागस्य दक्षिणस्य च नुर्भिषक् ॥ पश्येत्स्वानु
भवान्नाडीमभ्यासेनापिरत्नवत् ॥ १६ ॥

टीका—अब स्त्रीपुरुषोंकी नाडीका भेद कहते हैं।
गर्भाके याम अंगमें औ पुरुषके दक्षिण अंगमें वैद्य
साक्षात् अपने अनुभवकर्तिके औ अभ्यासकारिके
ज्ञानना, जैसे जीठरि रत्नकी परीक्षा स्वानुभव औ
अभ्यासकरिके करता है ॥ १६ ॥

अथ भेदग्यकारणं तंत्रांतरे चोक्तं ॥ कूर्मो विदे
हिनामरितनाभिस्थाने सदा स्थितः ॥ स्त्रीणां
मूर्ध्न्यमुखः पुंसामधोवक्त्रः प्रकीर्तितः ॥ १७ ॥
तस्यैव दक्षिणे भागे नाडी ज्ञेयाभिपग्वरः ॥ अ
नेन कारणेनैव नारीपुंसोर्व्यतिक्रमः ॥ १८ ॥

टीका—जो कहाकी, पुरुषके दाहिने औ स्त्रीके वामे अंगमें नाडीकी निश्चै करना चाहिये. सो इसका कारण यही है की, देहधारीमात्रके नाभिस्थानमें कूर्म सदा रहता है, सो स्त्रीके ऊर्ध्वमुख रहता है औ पुरुषके अधोमुख रहता है उसी कूर्मके दाहिने भागमें वैद्योंकरिके नाडी जानने योग्य है; इसवास्ते स्त्रीसँ पुरुषके व्यतिक्रम है ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथनाडीस्पर्शनविधिः ॥ वारत्रयंपरीक्षेत धृत्वा धृत्वा विमुच्य च ॥ विमर्श्य बहुधा बुद्ध्या तत्तोरोगं विनिर्दिशेत् ॥ १९ ॥

टीका—वैद्य रोगीकी नाडीपर तीन वरत अंगुली धरि धरि औ उठाई उठाके अच्छी तरहसँ बुद्धीमें विचार लेई फिर रोग कहै ॥ १९ ॥

अन्यच्च ॥ ईषद्विनामितमयेविततांगुलिचत्रालेनिगृह्य करमायिनोजनस्य ॥ पुंसोपसव्यमपिसव्यकरणपश्येनाड्यांचशश्वदपसव्यकरांगुलीभिः ॥ २० ॥ पित्तसमीरणमथोहिकफंक्रमेण ह्यंगुष्ठमूलत इति प्रवदंति वैद्याः ॥

८ नाडीज्ञानतरंगिणी.

नार्यास्तुवाममपसव्यकरेण धीरःसंगृह्यसव्य
करकांगुलिभिस्तथैव ॥ २१ ॥

टीका—अब नाडीस्पर्श करनेकी विधि कहते हैं.
रोगी पुरुषके दाहिने हाथको सीधी अंगुली करिके
औ किंचित् नवाइके आपके वामे हाथसे पकड़ीके
नाडीकेविषे अंगुष्ठाकी मूलसें लैके आपके दाहिने
हाथकी तीन अंगुली रखीकरिके क्रमसें तर्जनीके
नीचे पित्त, मध्यमाके नीचे वायु, अनामिकाके
नीचे कफको देखना. ऐसे वैद्य कहते हैं. और
स्त्रीका वाम हस्त आपके दाहिने हाथसें पकड़ीके
उसी क्रमसें आपके वामे हाथकी अंगुलीनसें
देखना चाहिये ॥ २० ॥ २१ ॥

उक्तंचपराशरसनत्कुमाराभ्याम् ॥ वाताधि-
क्वावहेन्मध्येत्वग्रेवहतिपित्तला ॥ अंतेश्लेष्म
वतीज्ञेयामिश्रितेमिश्रिताभवेत् ॥ २२ ॥

टीका—वाताधिक नाडी मध्यमें चलती है, पि-
ताधिक आदिमें वहती है, कफाधिक अंतमें वहती
है, औ मिश्रित होनेसें मिश्रित चलती है ॥ २२ ॥

अत्रदृष्टांतः ॥ तृणंपुरःसरंकृत्वायथावातोवहे

इली ॥ स्वानुगंचतृणंगृह्यपृथिव्यावक्रगोय
था ॥२३॥ एवंमध्यगतोवायुःकृत्वापित्तंपुरः
सरम् ॥ स्वानुगंकफमादायनाड्यांवहतिस
र्वदा ॥ २४ ॥ अतएवचपित्तस्यज्ञायतेचप
लगतिः ॥ चक्राप्रभंजनस्यापिवैद्यैर्मन्दाक
फस्यच ॥२५॥ वाताग्रेऽस्तिगतिःशीघ्रातृण
स्येतिविदृश्यताम् ॥ मंदानुगस्यवक्रावैमरुतो
मध्यगस्यह ॥२६॥ तथाऽत्रैवचज्ञातव्यागति
दोषत्रिकोद्भवा ॥ नान्यथाज्ञायतेस्नायुर्गतिरे
तद्विनिश्चितं ॥ २७ ॥

टीका—इहां दृष्टांत देते हैं. जैसे पृथ्वीमें जब
गति प्रबल पवन चलता है तब देखनेमें आता
है कि, तृणको अगाड़ीभी बड़े वेगसे उडाता
जाता है. औ पिछाडीकाभी तृण खींचता जाता है,
औ आप बीचमें वक्रगतीसे चलता है ॥ २३ ॥
ऐसे नाडीमें सर्वदा आप मध्यमें वक्रगतीसे रहिके
पित्तको अगाड़ी करिके कफको पिछाडी लिये
चलता है ॥ २४ ॥ इसीवास्ते पित्तकी चपलगति
वैद्योंकरिके जाननेमें आती है. और वायूकी वक्रग-

ति कफकी मंदगति जानी जाती है ॥ २५ ॥ देखो. प्रसिद्ध है की, जब जोरसें हवा चलती है; जिसको लोग आंधी कहते है, उसके अगाडी औ जो तृण उडता हैं सो बडे वेगसें चलता है. औ जो पीछे उडता है सो मंदगतीसें चलता है. बीचमें वायु आडाटेढा घूमता चलता है ॥ २६ ॥ तैसेही इहां-भी नाडीमें वात पित्त कफकी गति जानना चाहिये; और तरहसें नाडीकी गति बरोबरी निश्चै नहीं होती है ॥ २७ ॥

तदिदंकारणं ॥ पित्तंपंगुकफःपंगुः
पंगवोमलधातवः ॥ वायुनायत्रन्ती
यन्तेतत्रवर्पतिमेघवत् ॥ २८ ॥

टीका—तिसका यह कारण है की, पित्त औ कफ पंगुले हैं औ औरभी मलधातु पंगुले हैं; जहां वायु लै जाता है वहां मेघ किसीनाई वर्षते हैं ऐसे यहांभी वायुके आधीन पित्तादिक हैं ॥ २८ ॥

अथस्वस्थस्यनाडीलक्षणम् ॥ भूनागसदृशी
प्रायःस्वच्छास्वस्थस्यवैशिरा ॥ सुखितस्यस्थि-
गन्धेयातथावलवतीमता ॥ २९ ॥

टीका—स्वस्थ सुखीकी नाडीके चुवा जंतुसरीखी बहुधा चलती है, औ स्वच्छ, स्थिर, बलसंयुक्त होती है ॥ २९ ॥

प्रातःस्निग्धाशिराज्ञेया मध्यान्हे
प्युष्णतान्विता ॥ सायान्हेधाव
मानाचसदारोगविवर्जिता ॥ ३० ॥

टीका— रोगरहित नाडी प्रातःकालमें स्निग्ध ✓
याने स्थिर सचिक्कन सदा रहती है, मध्यान्हमें
उष्णतायुक्त, सायंकालमें शीघ्रगति होती है ॥ ३० ॥

अथनाड्यागतिरुच्यते ॥ वाताद्वक्रगतिर्ना
डीपित्ताच्चपलगाभवेत् ॥ कफान्मंदगतिश्चै
पामिश्रितेमिश्रिगातथा ॥ ३१ ॥

टीका—वातसें नाडी वक्रगति होती है. पित्तसें
चंचल होती है. कफसें मंदगति होती है. मिश्रित-
सें मिश्रित होती है ॥ ३१ ॥

अन्यच्च ॥ सर्पजलौकादिगतिंचदंति
हिवुधाःप्रभंजनेनाडीम्॥पित्तेचकाक
लावकभेकादिगतिंतथाचपलाम् ॥ ३२ ॥

टीका— वातरोगमें सर्प और जलौकादिककी

गति चलती है. पित्तरोगमें काक, लाव, मेढूक,
इत्यादि गति औ चपल चलती है ॥ ३२ ॥

राजहंसमयूराणांपारावतक
पोतयोः ॥ कुक्कुटादिगतिंघ
तेधमनीकफसंगता ॥ ३३ ॥

टीका—राजहंस औ मोर औ खवूतर, पडूखी औ
ककुट जो मुरग इनकी गतीसैं कफकी नाडी
चलती हे ॥ ३३ ॥

सर्पादिगतिकांनाडीकाकादिगति
कांतथा ॥ वातपित्तामयोन्मिश्रां
प्रवदंतिभिषग्वराः ॥ ३४ ॥

टीका—जो नाडी कहीं सर्पादिक गति औ कहीं
काकादिक गति मिश्रित चले .तिसको वेद्यश्रेष्ठ
वातपित्तमिश्रितरोगकी कहते हैं ॥ ३४ ॥

दंदशूकगतिंनाडीकदाचिदंसगामि
नीं ॥ कफवातामयोन्मिश्रांप्रवदंति
भिषग्वराः ॥ ३५ ॥

टीका—जो नाडी कदाचित् सर्पगति ओ कदा-
चित् हसगतीसैं चलती है उसको श्रेष्ठवैद्य कफवात-
मिश्रितरोगकी कहते हैं ॥ ३५ ॥

मंडूकादिगतिंनाडीकदाचिदंसगामि
नीं ॥ कफपित्तामयोन्मिश्रांप्रवदंति
भिषग्वराः ॥ ३६ ॥

टीका—जो नाडी कदाचित् मेडूककी गति औ
कदाचित् हंसकी गतीसें चलती है उसको श्रेष्ठवैद्य
कफपित्तकी नाडी कहते हैं ॥ ३६ ॥

अन्येऽप्याहुः ॥ क्षणेवक्राक्षणेतीव्रा
मध्यमातर्जनीतले ॥ स्फुटाभवति
सानाडीवातपित्तगदोद्भवा ॥ ३७ ॥

टीका—जो नाडी क्षणमें वक्र औ क्षणमें तीव्र
गतीसें तर्जनी औ मध्यमाके नीचे प्रकट होती है
सो वातपित्तरोगकी है ॥ ३७ ॥

स्फुटावक्राचमंदाच मध्यमानामिका
तले ॥ याभवेत्साहिविज्ञेया कफवा
तसमुद्भवा ॥ ३८ ॥

टीका—जो नाडी क्षणक्षणमें वक्र औ मंदगतीसें
मध्यमा ओ अनामिकाके नीचे प्रकट होती है सो
वातकफकी है ॥ ३८ ॥

क्षणेमंदाक्षणेतीव्राऽनामिकातर्जनी

तले ॥ स्फुटास्यात्साधराज्ञेया कफ
पित्तसमुद्भवा ॥ ३९ ॥

टीका—जो नाडी क्षणमें तीव्र औ क्षणमें मंद-
गतीसँ अनामिका औ तर्जनीके नीचे प्रकट होती
है सो कफपित्तकी है ॥ ३९ ॥

अन्ये चान्यरीत्या स्फुटमाहुः ॥ वातस्था
नेचयातीव्रावातपित्तगदोद्भवा ॥ मंदावा
तकफोन्मिश्रामध्यमाधोहिनाडिका ॥ ४० ॥

टीका—जो नाडी मध्यमा अंगुलीके नीचे जो वात-
स्थान है तहां तीव्र चलै तौ वातपित्तकी औ मंद
चलै तौ वातकफकी जानना ॥ ४० ॥

पित्तस्थानेचयावक्रापित्तवातोद्भवाचसा ॥
मंदापित्तकफातंकसंभवातर्जनीतले ॥ ४१ ॥

टीका—जो नाडी तर्जनीके नीचे पित्तस्थानमें
वक्र चलै तौ पित्तवात, औ मंद चलै तौ पित्तकफ-
संभव है यह जानना ॥ ४१ ॥

कफस्थानेचयातीव्राकफपित्तगदोद्भवा ॥ वक्रा
श्लेष्ममरुन्मिश्रातंकैसानामिकातले ॥ ४२ ॥

टीका—जो नाडी अनामिकाके नीचे कफस्थानमें

तीव्र चलती होय सो कफपित्तकी, औ वक्र होय
सो कफवातकी है यौ जानना ॥ ४२ ॥

अथज्वरकामादिनाडीलक्षणं ॥ ज्वरकोपे
नधमनीसोष्णावेगवतीभवेत् ॥ कामक्रो
धाद्वेगवहाक्षीणाचिंताभयप्लुता ॥ ४३ ॥ मं
दाग्नेःक्षीणधातोश्चनाडीमंदतराभवेत् ॥
अस्रुवपूर्णाभवेत्कोष्णागुर्वासामागरीय
सी ॥ ४४ ॥ लघ्वीवहतिदीप्ताग्नेस्तथावे
गवतीमता ॥ सुखितस्यस्थिराज्ञेयात
थावलवतीस्मृता ॥ ४५ ॥

टीका—अथ ज्वर औ कामादिकके नाडीलक्षण
कहते हैं. ज्वरके कोपसैं नाडी उष्णता औ वेगयुक्त
होती है. काम औ क्रोधसैं वेगयुक्त होती है. चिंता
औ भयकी नाडी क्षीण होती है ॥ ४३ ॥ जिसका
जठराग्नि मंद औ धातुक्षीण होती है उसकी नाडी
अतिमंद चलती है. जिसके रक्तविकार है उसकी
नाडी पत्यरसी भारी औ किंचित् गरम चलती है.
औ आमरोगयुक्त नाडी भारी लदेभैसेकी चालपर
होती है ॥ ४४ ॥ जिसका जठराग्नि प्रदीप्त है उ-

सकी नाडी हलकी औ वेगयुक्त चलती है औ सु-
खीकी नाडी स्थिर औ बलयुक्त होती है ॥ ४५ ॥

अथसन्निपातनाडीलक्षणं ॥ लावतित्ति
रवतीकंगमनासन्निपाततः ॥ अंगुलीत्रि
तयेऽपिस्यात्प्रव्यक्तासाधराध्रुवं ॥ ४६ ॥

टीका—जो नाडी लावपक्षी ओ तित्तिर औ बटेर-
की गतीसँ चलती है सो सन्निपातकी तीनों अंगु-
लीके नीचे प्रसिद्ध होती है ॥ ४६ ॥

अन्यच्च ॥ काष्ठकुट्टोयथाकाष्ठकुट्टते
चातिवेगतः ॥ स्थित्वास्थित्वातथा
नाडीसन्निपातेभवेद्भुवम् ॥ ४७ ॥

टीका—जैसे कठफोरापक्षी अतिवेगसँ काष्ठकों
रहिरहिके फोरता है तैसे सन्निपातमें नाडी होती है ॥

अथसाध्यासाध्यविचारः ॥ स्पंदतेचैकमा
नेनत्रिंशद्धारंयदाधरा ॥ स्वस्थानेनतदानूनं
रोगीजीवतिनान्यथा ॥ ४८ ॥

टीका—जो नाडी एकलग निरंतर आपके स्थान-
पर तीसवेर फरकै तो रोगी जीवै, नहीं तो नहीं ४८

अथासाध्यनाडीलक्षणं ॥ स्थिरानाडीभवे
द्यस्यविद्युद्युतिरिवेक्षते ॥ दिनैकंजीवितंत
स्यद्वितीयेमृत्युरेवच ॥ ४९ ॥

टीका—जिसकी नाडी स्थिर होय औ विजुलीस-
रीखी रहिरहिके चले तिसकी आयुः एक दिनकी है,
दूसरे दिन मृत्यु है ॥ ४९ ॥

अतिसूक्ष्मातिवेगावाशीतलाचभवेद्यदि ॥ त
दावैद्योविजानीयादयंरोगीविनश्यति ॥ ५० ॥

टीका—जिसकी नाडी अतिसूक्ष्म अथवा अतिवे-
गसँ चलती है तौ वैद्य ऐसा जाने की, यह रोगी
मरेगा ॥ ५० ॥

तिर्यगुष्णाचयानाडीसर्पवद्वेगवत्तरा ॥
कफपूरितकंठस्यजीवितंतस्यदुर्लभं ॥ ५१ ॥

टीका—जिसकी नाडी बक्र औ सर्पसरीखी अ-
तिवेगसँ चलती होय और कंठ कफकरिके भरा होई
तिस रोगीका जीवना दुर्लभ है ॥ ५१ ॥

दृश्यतेचरणेनाडीकरेनैवविदृश्यते ॥ मुखंवि
कसितंयस्यजीवितंतस्यदुर्लभं ॥ ५२ ॥

टीका—जिसके पगकी नाडी चलती होय औ

हाथकी न चलती होय ओ मुख फैली रहा होय
तिस रोगीका जीवना दुर्लभ है ॥ ५२ ॥

कंपतेस्पंदतेऽत्यंतंपुनःस्पृशतिचांगु
लीः ॥ तामसाध्यांविजानीयान्नाडीं
दूरेणवर्जयेत् ॥ ५३ ॥

टीका—जिसकी नाडी कंपयुक्त चलती चलती
रही जाय, ओ फिरि अंगुलीनकों स्पर्श करै तिसकी
नाडी असाध्य जानिके दूरिहिसें त्यागि देई ॥ ५३ ॥

शीघ्रानाडीमलोपेताशीतलावाथदृश्यते ॥
द्वितीयेदिवसेमृत्युस्तस्यनुर्भवतिध्रुवं ॥ ५४ ॥

टीका—जिसकी नाडी शीघ्र औ मलयुक्त चलती
होई वा शीतला याने थंड चलती होई तिसकी मृ-
त्यु दूसरे दिन जरूर होती है ॥ ५४ ॥

मुखेनाडीवहेत्तीव्राकदाचिच्छीतलावहेत् ॥ आ
यातिपिच्छिलःस्वेदःसप्तरात्रंसजीवति ॥ ५५ ॥

टीका—जिसकी नाडी अग्रभागमें अतिशीघ्र
चलती होय औ कदाचित् ठंडी होई ओ देहमें
चिकटापसीना आता होई तौ सो रोगी सात दिन
जीवे ॥ ५५ ॥

मुखेनाडीयदानास्तिमध्येऽत्यूवहिःकुमः ॥

यदामंदावहेन्नाडीसत्रिरात्रंनजीवति ॥ ५६ ॥

टीका—जिसकी पित्तनाडी नष्ट होगई ओ मध्यमें वातनाडी शीतल होगई औ बाहर ग्लानि होय औ नाडी मंद चलती होय सो तीनिरात्रि न जीवैगा ॥ ५६ ॥

शीघ्रानाडीमलोपेतामध्यान्हेऽग्निसमोज्वरः ॥

दिनैकंजीवितंतस्यद्वितीयेऽह्निम्रियेतसः ५७

टीका—जिसकी नाडी मलयुक्त होई औ मध्यान्हमें अग्नितुल्य ज्वर होई सो एक दिन जीवै ॥ ५७ ॥

हिमवच्छीतलानाडीज्वरदाहेनतापिनः ॥ त्रि-

दोषरुग्विभजतोमृत्युरेवदिनत्रयात् ॥ ५८ ॥

टीका—जिसकी नाडी हिमसरीखी ठंडी होय ओ जो ज्वरके दाहकरिके तपायमान होई ओ त्रि-दोषरोगकों प्राप्त भयी होई तिसकी मृत्यु तीन दिनमें हे ॥ ५८ ॥

स्वस्थानविच्युतानाडीयदावहतिवा

नवा ॥ ज्वालाचहृदयेतीव्रातदाज्वा

लावधिस्थितिः ॥ ५९ ॥

टीका—जिसकी नाडी स्थान छोड़ीके कधी चले, कधी न चले औ हृदयमें तीव्र ज्वाला होई तौ जहांतक ज्वाला है तहांतक जीता है ॥ ५९ ॥

अंगुष्ठमूलतोवाह्येद्वयंगुलेयदिनाडिका ॥ प्रहरार्धादहिर्मृत्युंजानीयाच्चविचक्षणः ॥ ६० ॥

टीका—अंगुष्ठाकी मूलसें दो अंगुल छोड़िके जो नाडी होई तो आधे पहर पीछे मरे ॥ ६० ॥

मध्येरेखासमानाडीयदितिष्ठतिनिश्चला ॥ षड्विंशप्रहरैस्तस्यमृत्युर्ज्ञेयोविचक्षणैः ॥ ६१ ॥

टीका—जिसकी नाडी वातस्थानमें जो रेखा-सरीखी निश्चल चलती होई तिसकी छःप्रहरमें मृत्यु है ॥ ६१ ॥

मंदमंदंशिथिलशिथिलंब्याकुलंब्याकुलंवा
स्थित्वास्थित्वावहतिधमनीयातिसूक्ष्मान
राणां ॥ नित्यंस्थानात्स्वलतिपुनरप्यंगु
लीःसंस्पृशेद्वाभावैरेवंबहुविधतरैःसन्निपा
तेत्वसाध्या ॥ ६२ ॥

टीका—जिन मनुष्योंकी नाडी मंद मंद, औ शिथिल शिथिल ओ व्याकुल व्याकुल चलती होई औ

रहिरहिके अतिसूक्ष्म औ निरंतर स्थानको छोड़िके
फिरिभी अगुलीनको स्पर्श करे ऐसे अनेकलक्षण-
युक्त सन्निपातकी नाडी असाध्य है ॥ ६२ ॥

अथचैतादृशलक्षणापिअनयागत्यासाध्या ॥
पूर्वपित्तगतिंप्रभंजनगतिंश्लेष्माणमाविभ्र
तीस्वस्थानाद्भ्रमणंसुहुर्विदधतीचक्रादिरूढा
मिव ॥ तीव्रत्वंदधतीकदाचिदपिवासूक्ष्मत्व
मातन्वर्तीनाऽसाध्यांधमनीवदंतिसुधियो
नाडीगतिज्ञानिनः ॥ ६३ ॥

टीका—अब ऐसे लक्षणयुक्त नाडीभी इस रीतिसे
साध्य है सो कहते हैं, जो नाडी स्पर्शसमयमें प्रथम
पित्तगति, फिरि वातगति फिरि कफगति चले औ
आपके स्थानसे भ्रमती हुई बारवार जैसे चक्रपर स्थित
होती है, ऐसे चले. कभी तीव्र, औ फिरि सूक्ष्मभी
चले तो इस नाडीको नाडीज्ञानगले असाध्य
नहीं कहते हैं ॥ ६३ ॥

भारप्रवाहमूर्च्छाभयशोकप्रमुखकार
णान्नाडी ॥ संमूर्च्छितापिगाढंपुनर
पिसाजीवितंधत्ते ॥ ६४ ॥

टीका—भारलै चलनेसें, मूर्च्छासें, भयसें शोकसें,
जो नाडी मूर्च्छितभी होती है तौभी साध्य है ॥ ६४ ॥
भूतावेशयुतस्यापिनष्टशुक्रस्यनाडिका ॥ त्रि
दोषगमनाचापिसूक्ष्माचापिनमृत्युदा ॥ ६५ ॥

टीका—भूतावेशयुक्तकी औ धातुक्षीणकी नाडी त्रि-
दोषगतिभी चलती है. औ सूक्ष्म तौभी मृत्युदायक
नहीं है ॥ ६५ ॥

स्वस्थानहीनाशोकेचहिमाक्रांतेचनिर्गदा ॥ भ
वंतिनिश्चलानाड्योनकिंचित्तत्रवैभयम् ॥ ६६ ॥

टीका—शोकमे औ शीतलगनेमे स्थिर नाडी
होय तौभी भय नहीं हे ॥ ६६ ॥

स्तोकंवातकफंनष्टं पित्तं वहतिदारुणम् ॥ पि
तस्थानं विजानीयात्तत्र भेषजमाचरेत् ॥ ६७ ॥

टीका—थोडा वात औ कफ नष्ट भया होई औ
पित्त दारुण चलै तौ औषध करना ॥ ६७ ॥

स्वस्थानच्यवनंयावद्वमन्यानोपजाय
ते ॥ तत्स्थचिह्नस्यसत्त्वेऽपिनाऽसा
ध्यत्वमितीरितम् ॥ ६८ ॥

टीका—जहातक नाडी विनकुल स्थानभ्रष्ट न होई

औ चिन्ह विदोषके होई तौभी असाध्य नहीं है ॥ ६८ ॥

अथाहारवशान्नाड्यागतिरुच्यते ॥ पुष्टिस्तै
लगुडाहारेमाषेचलगुडाकृतिः ॥ क्षीरेस्ति
मितवेगाचमधुरेहंसगामिनी ॥ ६९ ॥

टीका—अब आहारके वशसे नाडीकी गति क-
हते हैं. तेल औ गुड खानेसे नाडी पुष्ट होती है,
औ उडद खानेसे लकुठके आकार होती है, दूध
खानेसे मंदगति होती है औ मिष्ट भोजनसे हंसकी
गति होती है ॥ ६९ ॥

मधुरेवर्हिगानाडीतिकेस्थूलगतिर्भवेत् ॥ अ
म्लेभेकगतिः कोण्णाकटुकैर्भृंगसन्निभा ७०

टीका—मधुर भोजनसे नाडी मयूरगति होती है,
तिक्त भोजनसे स्थूलगति होती है, खटार्इसे किंचित्
उष्ण औ मेढूककी गति चलती है. कडूयेसे भ्रमरकी
गति चलती है ॥ ७० ॥

कषायेकठिनाम्लानालवणेसरलाद्रुता ॥ ए
वंद्वित्रिचतुर्योगेनानाधर्मवतीधरा ॥ ७१ ॥

टीका—कपैले भोजनसे कठिन औ मलिन याने,
किंचित् मंद चलती है. लवणरस भक्षणसे सरल औ

शीघ्रगति होती है. ऐसेही दो. तीनों चारी वा सर्व मिलनेसें नानाप्रकारकी गति होती है ॥ ७१ ॥

द्रवेतिकठिनानाडीकोमलाकठिनाशने ॥ द्रवद्रव्यस्यकाठिन्येकोमलाकठिनापिच ॥ ७२

टीका—द्रव याने पतला जैसे कठिन इत्यादि मक्षण करनेसें अतिकठिन नाडी चलती है औ कठिन आहारसें कोमल चलती है औ जो द्रवद्रव्य कठिन तालियेहोई तौ कोमल औ कठिनभी चलती है ॥ ७२ ॥

द्रव्यैश्चमधुरान्लाघैर्नाडीशीताविशेषतः ॥

चिपिटैर्भ्रष्टद्रव्यैश्चस्थिरामंदतराभवेत् ७३

टीका—मीठे और खट्टे मिश्रितसें नाडी विशेषकरिके ठंडी रहती है औ चूरा जिनको पौहाभी कहते हैं इनसें औ सिके चर्वनसें स्थिर औ मंद होतीहै ॥ ७३ ॥

कूष्मांडैर्मूलकैश्चैवभवेन्मंदाहिनाडिका ॥

शाकैश्चकदलैश्चैवरक्तपूर्णवसाभवेत् ॥ ७४ ॥

टीका—कूष्मांड औ मूलीसें नाडी मंद होती है. शाक अरु केलेसे रक्तपूर्ण जैसी होती है ॥ ७४ ॥

मांसात्स्थिरवहानाडीदुग्धाच्छीता

वलीयसी ॥ सुदक्षिरैःसपिष्टैश्च

स्थिरामंदाधराभवेत् ॥ ७५ ॥

टीका—मांसखानेसें नाडी स्थिर, दूधसें ठंढि औ बलयुक्त, गुड, दूध औ पिष्टसें स्थिर औ मंद होती है ॥ ७५ ॥

मैथुनांतं भवेच्छीघ्रासरलापिचनाडिका ॥

मलाजीर्णेन नितरां स्पंदते तंतुसन्निभा ॥ ७६ ॥

टीका—मैथुनांतमें नाडी शीघ्र ओ सरल चलती है औ मलाजीर्णमें तंतुसरीखी किंचित् किंचित् चलती है ॥ ७६ ॥

व्यायामे भ्रमणे चैव चिंतायां धनशोकतः ॥

नानाप्रकारगमनाजीवितज्ञा भवेद्भुवं ॥ ७७ ॥

टीका—कसरति करनेमें, फिरनेमें, चिंतामें, धनके शोकमें, नाडीकी नानाप्रकारकी गति होती है ७७

अजीर्णे तु भवेन्नाडी कठिनापरितोजडा ॥ ५

पक्वाजीर्णे पुष्टिहीना मंदमंदं प्रवर्तते ॥ ७८ ॥

टीका—अजीर्णमें नाडी कठिन औ जड होती है औ पक्वाजीर्णमें पुष्टिहीन औ मंदगतीसें चलती है ॥ ७८ ॥

विषूचिकाऽभिभूते च नाडिका मेकसंक्रमा ॥

प्रमेहे चोपदंशे च ग्रंथिरूपा धरास्मृता ॥ ७९ ॥

टीका—विषूचिका रोगमें नाडी मेढुकगती चलती है, प्रमेह औ उपदशमें ग्रंथिरूप चलती है. ॥ ७९ ॥
 प्रदरेरक्तपीतेचश्वेतेग्रंथिवदच्छति ॥ क्षत
 कासेतथाराजयक्ष्मणिग्रंथिरूपिणी ॥ ८० ॥

टीका—श्वेतप्रदर, रक्तपीत ओ क्षतकास, तथा क्षयरोगमें ग्रंथिरूप चलती है ॥ ८० ॥

वांतस्यशल्याभिहतस्यजंतोर्वेगावरोधाकुलि
 तस्यचैव ॥ गतिविधत्तेधमनीगजेंद्रमराल
 कानांचकफोल्बणस्य ॥ ८१ ॥

टीका—जिस पुरुषमें वांति किसी होई, अथवा जिसके तीर वगैरे लगाहोई अथवा जो मलादिक-वेगसें व्याकुल होई, अथवा जिसके कफ बहुत होई तिसकी नाडी हाथी औ हसकी गतीसें चलती है ॥ ८१ ॥

अथान्यमतानुसारेणस्वस्थनाडीलक्षणम् ॥
 अयिप्रियेशृणुज्यैववदाम्यहंमतांतरं ॥ नर
 स्यजन्मकालतोह्यशीतिवत्सरावधि ॥ शि
 शोर्हिजन्मकालतः पलावधिप्रकंपते ॥ धरा
 रसेपुवारकंनिरंतरंशिशुप्रिये ॥ ८२ ॥

टीका—हे प्रिये, अब मैं मतातरसें स्वस्थनाडीका लक्षण कहता हों, जन्मकालसें असी वर्षपर्यंत कहता हों, जन्मकालसें एक पलपर्यंतमें नाडी ५६ छप्पन्न बार फरकती है ॥ ८२ ॥

पलादारभ्यवर्षांतंपलैकेनचनाडिका ॥ नेत्रे पुकृत्वश्चलतिमत्तकुंजरगामिनि ॥ ८३ ॥

टीका—जन्मकालसें पलपरमितकाल पीछे एक वर्ष पर्यंत एक पलमें वावन ५२ बेर चलती है ॥ ८३ ॥

अब्दादब्दद्वयं नाडीपलैकेन प्रवेपते ॥ वेदा विधवारं लोलाक्षिचलकुंडलशालिनि ॥ ८४ ॥

टीका—एकवर्ष पीछे दोवर्षपर्यंत एकपलमें नाडी चौवालिश ४४ बेर कंपती है ॥ ८४ ॥

वर्षद्वयात्रिवर्षांतंपलैकेन चतंतुकी ॥ खवेद कृत्वश्चलतिपीनोत्तुंगपयोधरे ॥ ८५ ॥

टीका—दोवर्षपीछे तीनिवर्षतक एकपलमें चालीश ४० बेर नाडी चलती है ॥ ८५ ॥

त्रिवर्षात्सप्तवर्षांतंपट्त्रिंशद्धारकंप्रिये ॥ कंपतेचपलैकेन जीवितज्ञाप्रियंवदे ॥ ८६ ॥

टीका—तीनिवर्षकी अवस्थापीछे सातवर्षकी आ-

टीका—विपूचिका रोगमें नाडी मेडुकगती चलती है, प्रमेह औ उपदंशमें ग्रंथिरूप चलती है. ॥ ७९ ॥
 प्रदरेरक्तपीतेचश्वेतेग्रंथिवदच्छति ॥ क्षत
 कासेतथाराजयक्ष्मणिग्रंथिरूपिणी ॥ ८० ॥

टीका—श्वेतप्रदर, रक्तपीत ओ क्षतकास, तथा क्षयीरोगमें ग्रंथिरूप चलती है ॥ ८० ॥

वांतस्यशल्याभिहतस्यजंतोर्वैगावरोधाकुलि
 तस्यचैव ॥ गतिंविधत्तेधमनीगजेंद्रमराल
 कानांचकफोल्बणस्य ॥ ८१ ॥

टीका—जिस पुरुषने वांति कियी होई, अथवा जिसके तीर वगैरे लगाहोई अथवा जो मलादिक-वेगसे व्याकुल होई, अथवा जिसके कफ बहुत होई तिसकी नाडी हाथी औ हंसकी गतीसे चलती है ॥ ८१ ॥

अथान्यमतानुसारेणस्वस्थनाडीलक्षणम् ॥
 अयिप्रियेशृणुज्वैववदाम्यहंमतांतरं ॥ नर
 स्यजन्मकालतोह्यशीतिवत्सरावधि ॥ शि
 शोर्हिजन्मकालतः पलावधिप्रकंपते ॥ धरा
 रसेपुवारकंनिरंतरंशिशुप्रिये ॥ ८२ ॥

टीका—हे प्रिये, अब मैं मतातरसें स्वस्थनाडीका लक्षण कहता हों. जन्मकालसें असी वर्षपर्यंत कहता हों, जन्मकालसें एक पलपर्यंतमें नाडी ५६ छप्पन बार फरकती है ॥ ८२ ॥

पलादारभ्यवर्षांतपलैकेनचनाडिका ॥ नेत्रे पुकृत्वश्चलतिमत्तकुंजरगामिनि ॥ ८३ ॥

टीका—जन्मकालसें पलपरमितकाल पीछे एक वर्ष पर्यंत एक पलमें वावन ५२ बेर चलती है ॥ ८३ ॥

अब्दादब्दद्वयं नाडीपलैकेन प्रवेपते ॥ वेदा विधवारं लोलाक्षिचलत्कुंडलशालिनि ॥ ८४ ॥

टीका—एकवर्ष पीछे दोवर्षपर्यंत एकपलमें नाडी चौवालिश ४४ बेर कंपती है ॥ ८४ ॥

वर्षद्वयात्रिवर्षांतपलैकेन चतंतुकी ॥ खवेद कृत्वश्चलतिपीनोत्तुंगपयोधरे ॥ ८५ ॥

टीका—दोवर्षपीछे तीनवर्षतक एकपलमें चालीश ४० बेर नाडी चलती है ॥ ८५ ॥

त्रिवर्षात्सप्तवर्षांतषट्त्रिंशद्धारकंप्रिये ॥ कंपतेचपलैकेन जीवितज्ञाप्रियंवदे ॥ ८६ ॥

टीका—तीनवर्षकी अवस्थापीछे सातवर्षकी आ-

युःपर्यंत नाडी एकपलमें छत्तिसवार ३६ फरकती है ८६
सप्तमान्मनुवर्षांतवेदाग्निवारकंधरा ॥ तत
श्चत्रिंशद्वर्षांतद्वात्रिंशद्वारमेवहि ॥ ८७ ॥

टीका—सातवर्षपीछे चौदहवर्षतक नाडी एकप-
लमें चौतीस ३४ वार चलती है औ चौदवर्षपीछे
तीसवर्षतक एक पलमें बत्तीस ३२ वार चलती है ८७
त्रिंशदब्दात्समारभ्यखशराब्दांतमेवच ॥ खा
ग्निवारान्विशालाक्षिजीवितज्ञाप्रकंपते ॥ ८८ ॥

टीका—तीसवर्षसे पचासवर्षतक नाडी एकपलमें
तीस ३० वार चलती है ॥ ८८ ॥

शतार्धवर्षादारभ्याशीतिवर्षांतमेवहि ॥ च
तुर्विंशतिवारान्वैकंपतेधमनिःप्रिये ॥ ८९ ॥

टीका—पचास वर्षके पीछे अशीवर्षतक चौबीस
३४ वार नाडी एकपलमें चलती है ॥ ८९ ॥

एवमुक्तप्रमाणाच्चभवेन्न्यूनाधिकंयदि ॥ न्यू
नाधिकेकमात्स्यातांशीतोष्णेचघटस्तनि ॥

टीका—ऐसे उक्त प्रमाणसे जो न्यून चले तो
शीतत्व औ जो जादा चले तो उष्णता है ॥ ९० ॥

अथनाडीगतिकारणम् ॥ हृदयंचेतना

स्थानंतज्ज्ञातृसुखदुःखयोः ॥ तत्संकोच
विकाशाभ्यांजीवितज्ञाप्रकंपते ॥ ९१ ॥

टीका—अथ नाडीके गतिका कारण कहते है.
चेतनाका स्थान हृदय है सोई सुखदुःखका ज्ञाता है.
तिसके संकोच औ विकाशसें नाडी चलतीहै॥९१॥

वायुरंतर्वहिर्यातितत्संकोचविकाशतः ॥ ते
ननाड्यांवहत्यसृक्तेनतस्यागतिर्भवेत्॥९२॥

टीका—उसी संकोचविकाशतें वायु अंदर औ बाहर
चलता है, उस चलनेसें नाडीमें रक्त बहता है. उसी
प्रवाहकरिके नाडीकी गति जानी जाती है ॥ ९२ ॥

अथनाडीज्ञानेप्रयत्नोऽवश्यमेवकर्तव्यः ॥ स
यथा ॥ नाडीज्ञानंविनाकश्चिद्वैद्यःसद्भिर्नपू
ज्यते ॥ ततश्चातिप्रयत्नेनतज्ज्ञानंगुरुतो
लभेत् ॥ ९३ ॥

टीका—अथ नाडीज्ञानमें प्रयत्न तो अवश्य कर-
ना सो कहते हैं. नाडीज्ञानविना कोईभी वैद्य श्रेष्ठ-
जनोंमें पूज्य नहीं होता है. इसवास्ते बड़ा प्रयत्न क-
रिके नाडीज्ञान गुरुसें लेना ॥ ९३ ॥

कचिद्ग्रंथानुसंधानादेशकालविभागतः ॥

कचित्प्रकरणाच्चापिनाडीज्ञानंभवेदपि॥९४॥

टीका—कहीं ग्रंथके अनुसंधानसें, कहीं देशकाल-
के विभागसें, कहीं प्रकरणसें नाडीज्ञान होता है॥९४॥

यथावीणागतातंत्रीसर्वान्रागान्प्रभाषते ॥ त

थाहस्तगतानाडीसर्वान्त्रोगान्प्रकाशते ॥९५॥

टीका—जैसे वीणामें तांति सब रागोंके भाषण
करती है, तेसे हाथमें नाडी सर्व रोगोंका प्रकाश
करती है ॥ ९५ ॥

सद्गुरोरुपदेशाच्चदेवतानाप्रसादतः ॥ नाडी

परिचयःसम्यक्प्रायःपुण्येनजायते ॥ ९६ ॥

टीका—सद्गुरुके उपदेशसें औ देवताकी प्रसन्नतासें
औ बहुधा पुण्यसें नाडीका पहिचानना आता है ॥९६॥

अथग्रंथकर्तुःपरंपरा ॥ वालाशर्माऽभवद्विप्रः

सुकलःकुलवर्धनः ॥ कान्यकुब्जोहितद्वंशेभव

द्रोवर्धनोभिषक् ॥ ९७ ॥ तापीरामःसुतस्त

स्यतस्यासंस्तनुजास्त्रयः ॥ सीतारामश्चदत्त

श्चमोतीरामइतिप्रिये ॥ ९८ ॥ सीताराम

प्रियालक्ष्मीस्तत्साकंयादिवंगता ॥ दग्ध्या

मौप्राकृतं देहं तच्छरीरेण संयुतं ॥ ९९ ॥ त
स्याएव हि पुत्रोऽहं पतिदेववरंगने ॥ निर्मितेयं
मया बालेनाडीज्ञानतरंगिणी ॥ १०० ॥

टीका—अथ ग्रंथकर्ता की परंपरा. अगाडी एक
वालाशर्मा कान्यकुब्ज ब्राह्मण सुकल होते भए.
सो आपके कुलके बढानेवाले होते भए. तिनके वं-
शमें गोवर्धन सुकल भए ॥ ९७ ॥ तिनके तापी-
राम भए, तिनके तीनि पुत्र भए; सीताराम, दत्तप्र-
साद, मोतीराम ॥ ९८ ॥ तिनमें सीतारामकी स्त्री
लक्ष्मी जो आपकी प्राकृत देह आपके पतिके देह-
के साथ जलाइके औ उनके संगही स्वर्गकों गई
॥ ९९ ॥ हे पतिव्रतनमें श्रेष्ठ मैं उसी माताका पुत्र
हौ यह नाडीज्ञानतरंगिणी मैं रची है. ॥ १०० ॥

लोलाक्षी ॥ पंपय्यानामगंधर्वो विलग्रामेऽभ
वत्किल ॥ तस्याहमौरसीकन्यादासीत्वच्चर
णाब्जयोः ॥ १०१ ॥ तवरूपगुणौदार्यविश्रु
तंगुणवारिधे ॥ जनैः ख्यातं तथा दृष्टं कृतकृ
त्यास्मि सांप्रतम् ॥ १०२ ॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मंजरघुनाथ
प्रसादविरचितानाडीज्ञानतरंगिणीसमाप्ति-
मगात्.

टीका—हे गुणवारिधे, पंपयानाम गंधर्व विलग्राम-
नामनगरमें होता भया तिसकी मैं कन्या हौं. औ
आपके चरणकमलकी दासी हौं ॥ १०१ ॥ लो-
कोंकरिके विख्यात आपका रूप, गुण, उदारता, सु-
निके आपके सन्निध मैं आई सो जैसा सुना तैसा-
देखा. अब मैं कृतकृत्य भई ॥ १०२ ॥

॥ इति श्रीरमणविहारीविरचिता नाडीज्ञान
तरंगिणीटीका तरणीसंज्ञिका समाप्ता ॥

श्रीः

अनुपानतरंगिणीप्रारंभः ।

नमोगजास्येश्वरदेवदेवत्वतोऽस्यजन्मादय
एवतुभ्यं ॥ भवन्तितस्याअतईशरक्षधन्वंतरि
र्यःकृपयाऽभवस्त्वम् ॥ १ ॥

टीका—अथ कवि प्रथम निर्विघ्नसमाप्तिके वास्ते
इष्टदेवताको नमस्कारपूर्वक मंगलाचरण करते हैं.

नमोइत्यादि करिके—हे गजास्येश्वरदेवदेव, तुमकों मे-
रा नमस्कार होई, तुमहीसें इस जगतके जन्म रक्षा
प्रलय होते है और जो आप इस जगतपर कृपा क-
रिके धन्वंतरि होते भए इसवास्ते आप रक्षा करौ ॥ १ ॥

अथकविप्रिया ॥ प्राणेशधातवःसप्ततथास
प्तोपधातवः ॥ शोधनंमारणंतेषामनुपानं गु
णगुणम् ॥ २ ॥

टीका—कविप्रिया पूछती है की, हे प्राणनाथ, सा-
तधातु औ सात उपधातु है, तिनका सोधन, मारण,
अनुपान, गुण औ अवगुण कहो ॥ २ ॥

तथान्येषांरसानांवाऔषधीनांचमानद ॥ प्री
तयेममकंजाक्षवदवैद्यशिरोमणे ॥ ३ ॥

टीका—तैसेही और रसोंका और औषधिनकाभी
मेरी प्रीतकेवास्ते कहो. आप कमलनयन हैं औवैद्योंमें
श्रेष्ठ हैं ॥ ३ ॥

कविः ॥ अयिनितंविनिकंजविलोचनेघनकुचे
वनितामदमोचने ॥ शृणुवदामिहितांहिनृ
णामहंगदवतामनुपानतरंगिणीं ॥ ४ ॥

टीका—कवि उत्तर देताहै हे नितंबिनि, हे कंज-

विलोचने, इत्यादि संबोधनयुक्त प्रिये, तुम सुनो. मैं अनुपान तरंगिणी कहता हूँ. केसी हे यह अनुपानतरंगिणी की रोगी मनुष्योंकी हितकारक है ॥४॥

अथसप्तधातवः ॥ स्वर्णतारंप्रियेताम्रनागवं
गमनोहरे ॥ स्वर्णांगिजसदंलोहंसप्तैतेधातवः
स्मृताः ॥ ५ ॥

टीका—अब सप्त धातु गनातेहैं. हे प्रिये, सोना १, (रुपा २, तांबा ३, (सीसा ४, (रांगा ५) जिसै कलईमी कहते हैं. जसद ६, लोह ७ (ये धातु हैं ॥५॥

जसदादित्यजंविद्धिपित्तलंप्रियवल्लभे ॥ रवि
रंगभवंकांस्यंकश्यपान्वयरत्नजे ॥ ६ ॥

टीका—हे प्रियवल्लभे, जसद और ताम्रसे पित्तल होता है, औ हे कश्यपान्वयरत्नजे, ताम्र रंगसे कांसा होता है. ॥ ६ ॥

अथशुद्धिप्रवक्ष्यामिधातुदोषापनुत्तये ॥ तैले
तक्रेचगोमूत्रेकांजिकेकेकुलत्थजे ॥७॥ सूक्ष्म
पत्राणिसंताप्यनागवंगेसुगालिते ॥ जसदंग
लितंचैवसप्तवारंविनिःक्षिपेत् ॥ ८ ॥ शुद्धि
मायांतिसंशुद्धकुलोद्धृतवरांगने ॥ नागवंगे

तुवार्कस्यदुग्धेवारत्रयंक्षिपेत् ॥ ९ ॥ द्रवीभू
तेविशुद्धेतेअमीषांमारणंशृणु ॥ मृताहेमा
दिकाःसर्वेधातवोगदघातकाः ॥ १० ॥

टीका—अथ धातुनके दोष दूरिकरनेकेवास्ते शु-
द्धि कहते हैं. तेलमें १, तक्रमें २, तक्रको मठा
औ छालीभी कहते हैं, गोमूत्रमें ३, कुलथीकी काढेमें
४, औ कांजीमें ५, कांजीकी विधि भातका मांड
अथवा कुलथीका जूसमें सोठी, राई, जिरा, हिंग,
लवण ये माफिकसा मिलाइके तीनि वा चारी दिन
रख छोडै. जब खट्टा होई तब काममे लेवै. इन
पांचोंमे तपाई २ सात सात वखत बुझावै तौ शुद्ध
होई. तहां सोना १, चांदी २, तांबा ३, लोह ४,
पितल ५, कांसां ६, इनके वारिक पत्र करिके तप्त
करि करिके बुझावै. औ रांगा सीसा जसद गलाइके
बुझाई लेई, अथवा रांगे सीसेको आंकके दूधमें
तीनि वखत बुझायलेनेसें शुद्ध होते है. अथ इनका
मारण कहते है. क्यों की, मरे भये धातु रोगके
मारनेवाले होते है ॥ १० ॥

तत्रादोस्वर्णविधिः ॥ तत्रापिशुद्धस्वर्णपरी

क्षा ॥ वन्हितप्तंहियच्छीतेरक्तत्वंभजतेचतत्
शुद्धंश्वेतत्वमपियद्भजतेऽशुद्धमीरितं ॥११॥

टीका—तहां प्रथम धातुनमें सोनेका मारना क-
हते हैं, तहांभी प्रथम परीक्षा कहते हैं, जो
सोना अग्निमें तपाइके ठंडा किए पीछे लालरंग
रहै सो श्रेष्ठ, श्वेत नहीं ॥ ११ ॥

अथमारणं ॥ शुद्धसूतसमंखल्वेस्वर्णंगोलं
विधायच ॥ द्वयोस्तुल्यंवलंशुद्धंदत्वाधश्चो
र्ध्वमेवहि ॥ १२ ॥ शरावसंपुटेदत्वापुटत्रिंश
दनोपलैः ॥ चतुर्दशपुटैरेवंनिरुत्थंभस्मजा
यते ॥ १३ ॥

टीका—शुद्ध पारा औ सोनेका चूरन खल करिके
गोला बनावै फिरि दोनोंकी तुल्य शुद्ध गंधक नीचे
ऊपर रखिके शरावसंपुटमें तीस जंगली कंडोंकी
आंच देई ऐसे चौदह पुटमें निरुत्थ भस्म होता
है, निरुत्थ उसको कहते हैं की, जो मधुघृतटंकण-
युक्त आंच देनेसें न जियै ॥ १३ ॥

अथान्यप्रकारः ॥ गालितेहाटकेनागंघोडशां
शंविनिःक्षिपेत् ॥ शीतेतस्मिन्सुसंमर्द्यनिंबु

॥ श्री ॥

LIBRARY

नाडीज्ञानतरंगिणी औ अनुपानतरंगिणी.

यहपुस्तक

प्रसिद्ध कर्त्ता

हरिप्रसादभगीरथ गौडब्राह्मण.

मुंबई

निर्णयसागरछापखाना.

संवत् १९४६

१७ वा आक्ट २५ प्रमाणे रजिस्टर किया है

लेप लगावै और शरावसंपुटमें पुट देई तौ एक्हीं गजपुटमें शुद्ध भस्म होई ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथहेमभस्मसामान्यगुणाः ॥ तपनीयं
तंकांतिकंदर्पतनुतेतथा ॥ वातापित्तप्रमेहं च
कासंश्वासंक्षतंक्षयं ॥ १९ ॥ ग्रहणीमतिसारं
चज्वरंकुष्ठंविषंहरेत् ॥ वयसःस्थापनंस्वर्णं
बल्यंवृष्यंरुचिप्रदं ॥ २० ॥

टीका—अथ सोनेकी भस्मके सामान्य गुण कहते हैं, मरा सोना कांति औ कामदेवकी वृद्धि करता है, औ वात, पित्त, कफ, प्रमेह, श्वास, घाव, क्षयरोग, संग्रहणी, अतिसार, ज्वर, कुष्ठ, विष इन रोगोंका नाश करता है ओ अवस्थाका स्थापन करनेवाला है, स्वर सुंदर करे है, बल बढ़ाता है, स्त्रीगमनकी इच्छा जादा बढ़ाता है ओर अन्नपर रुची बढ़ाने-वाला है ॥ १९ ॥ २० ॥

अथापक्वदोषाः ॥ स्वर्णमपक्वंहरतेवलंचवी
र्यकरोतिरोगचयम् ॥ सुखस्यनाशंमरणंत
स्माच्छुद्धंचसेवेत ॥ २१ ॥

टीका—अब अपक्वके सोनेके अवगुण कहते हैं ।

अधपक्का सोना बल ओ वीर्यका नाश करता है,
और सुखकाभी नाश औ मरणभी करता है. इस-
वास्ते शुद्ध भस्मका सेवन करना ॥ २१ ॥

अथतद्वोषशांतिः ॥ अभयासितयाभुक्तात्रि
दिनंनृभिरंगने ॥ हेमदोषहरीख्यातासत्यं
प्राणकुमारिके ॥ २२ ॥

टीका—अब अपक्वदोषशांति कहते हैं. हरडे और
शकर तीन दिन खानेसें स्वर्णविकार जाता है. है^{१५}
प्राणकुमारि यह सत्य है ॥ २२ ॥

अथानुपानं ॥ वाजीकरंभृंगरसेनतूर्णदुग्धे
नशक्तिंप्रददातिनित्यं ॥ पुनर्नवायुगूनयना
मयघ्नंजराहरंचाज्ययुतंनराणां ॥ २३ ॥

टीका—अथ अनुपान कहते हैं. सोनेकी भस्म
भांगरेके रसमें लेनेसें वाजीकरण है, वाजीकरण उसकां
कहते हैं. जिसके लेनेसें घोडासारखा स्त्रीके संग
रमण करे. दूध संग लेई तां शक्ति बढ़ावे, पुनर्न-
वासंग नेत्ररोग हरता है. घृतसंग वृद्धपनेको मिटायके
ज्वान करता है ॥ २३ ॥

बुद्धिदंतुवचायुक्तंदाहर्नकदुकायुतं ॥
कांतिदंकुंकुमेनेदंकांतिजिन्नवनीरजे ॥ २४ ॥

टीका—वचके साथ बुद्धि देता है. कुटकीके साथ दाहशाति करता है. कुटकीको कडूभी कहते हैं. केसरसंग कांति बढ़ाता है ॥ २४ ॥

सद्योदुग्धयुतंहंतियक्ष्माणमतिदारुणं ॥ ल
वंगशुंठिमरिचैरुन्मादंचत्रिदोषकं ॥ २५ ॥

टीका—तुरत दुहे दूधसाथ क्षयरोग दूर करता है. लवंग सौंठी काली मरीचके साथ उन्मादरोग हरता है. औ त्रिदोषकोभी हरता है ॥ २५ ॥

मध्वामलकसंयुक्तंग्रहणींप्रवलांहरेत् ॥
मधुनावरखंहैमंविषदोषनिवारणं ॥ २६ ॥

टीका—मधु औ आमलाके साथ संग्रहणीको, सो-
नेके वरख औ मधुयुक्त विष हरता है ॥ २६ ॥

शंखपुष्पीरसैरायुःप्रदंचंदनचर्चिते ॥ विदा
रीकंदसंयुक्तंपुत्रदंपुत्रवत्सले ॥ २७ ॥

टीका—संखाहुलीके रससंग आयुष्य बढ़ाता है. विदारिकदसंग पुत्र देनेवाला है ॥ २७ ॥
इति स्वर्णानुपानानि.

अथरौप्यविधिः ॥ तत्रपरीक्षा ॥ शृणुहिरू
पमतिप्रमदोत्तमे वदभिषग्वररूपगुणाकर ॥

त्रिविधमाहुरयेरजतंप्रियेखनिजवेधजवंगज
मार्यकाः ॥ २८ ॥

टीका—अथ रौप्यविवे, तहा प्रथमपरीक्षा, रूपा
तीनि प्रकारका है. एक खानिसें पैदा, दूसरा वेधसें,
तीसरा वंगसें पैदा होताहै ॥ २८ ॥

उत्तमंवंगजवेधजकीर्तितयन्मृदुत्वंहिशौ
क्ल्यंभजेदंगने ॥ शुभ्रवर्णंमृदुत्वेनहीनंय
तोऽग्राह्यमित्याहुरार्याःखनिस्थंततः॥२९॥

टीका—तिनमें वेधसें औ वंगसेंभी उत्पन्न रौप्य
जो कोमल औ श्वेतवर्ण है सो श्रेष्ठ है ॥ २९ ॥
अथमारणं ॥ तारपत्राणिसूक्ष्माणिकृत्वासं
शोध्यपूर्ववत् ॥ तत्समौसूतगंधौचकांजिके
नविलेपयेत् ॥ ३० ॥

टीका—अथ मारणविधि. चांदीके कंटकवेधी सूक्ष्म-
पत्रकरिके पूर्ववत् शोधन करै. उनपत्रोंकी समान
पारा, गंधककों कांजीमें घोटिके लेप करै ॥ ३० ॥
स्थाल्यांपचेद्दिनरुद्ध्वाभस्मस्यात्तीक्ष्णवह्निना
॥ बालकैणाक्षिविवोष्ठिस्वर्णकुंभकुचेप्रिये३१

टीका—फिर उनको एक हांडीमें मुद्रित करिके
एक दिनतीक्ष्ण अग्निकी आंच देइ तौ भस्म होई ३१

अथान्यःप्रकारः ॥ तारपत्रचतुर्थांशं
शुद्धतालंविमर्दयेत् ॥ जंवीरजैर्द्रवैस्ते
नतत्पत्राणिविलेपयेत् ॥ ३२ ॥

टीका—अथ दूसरा प्रकार. रूपेके पत्रसँ चतुर्थ भाग
शुद्ध हरिताल निंबूके रसमें घोटिके लेपन करे ॥ ३२ ॥

संपुटेपाचयेद्बुध्वात्रिभिरेवपुटैर्भवेत् ॥ त्रिंश
द्वनोपलैर्भूतिःशीलरूपगुणान्विते ॥ ३३ ॥

टीका—फिरि शरावसपुटकरिके तीस जंगली
कंडाकी आंच देई ऐसी तीन पुटमें भस्म होता है. ३३

अथान्यः ॥ रजतेनसमंसूतपेषयित्वाप्रमेल
येत् ॥ तत्समंतालकंगंधनिंबुनीरैर्विमर्दयेत् ॥

टीका—अथ तिसरा प्रकार. प्रथम रूपा औ
पारा दोनौ समभाग लेकै खल करे. फिरि इनि
दोनौके बरोबर हरिताल ओ गंधक मिलाइके निंबू-
के रसमें घोटै ॥ ३४ ॥

संपुटेरोधयित्वातुपाच्यंत्रिंशद्वनोपलैः ॥ एवं
रामपुटैस्तारंनिरुत्यंभसितंभवेत् ॥ ३५ ॥

टीका—फिरि शरावसंपुटमें तीस कंडाकी पुट
देई ऐसे तीन पुटमें भस्म होता है ॥ ३५ ॥

अथान्यः ॥ शुकप्रियापीतकपत्रकल्केचतुर्गु
णेतारकमेवरुध्वा ॥ शरावकेसंपुटकेपुटेच्चत्रि
भिःपुटैरेववराहसंज्ञैः ॥ ३६ ॥

टीका—अथ चौथा प्रकार, दाडीम और बबूरके
पत्र तोले चारिकी लुगदीमें एक तोला रूपा रसिके
हाथ भरि गहिरे चौड़े खाठेमें शरावसंपुटसें पुट
देई तौ तीन पुटसें भस्म होता है ॥ ३६ ॥

अथगुणाः ॥ तारंकरोत्यामयसिंधुपारंपित्ता
पहंवातकफौनिहन्ति ॥ गुल्मंप्रमेहंश्वसनंच
कासंस्त्रीहृक्षयक्षीणयकृद्विषार्तिम् ॥ ३७ ॥

टीका—अथ सामान्य गुण. रौप्यभस्म रोग स-
मुद्रके पार उतारता है. पित्त, कफ, वात, गुल्म, प्र-
मेह, श्वास, कास, स्त्रीहा, क्षय, क्षीण, यकृत, विष
इनरोगोंका नाश करता है ॥ ३७ ॥

वलीपलितनाशनंक्षुधाकांतिपुष्टिदं ॥ पांडु
शोफहंद्दातिचायुपंनृणामिदं ॥ ३८ ॥

टीका—औ वलीपलितनाशकभी है. क्षुधा औ
तेजकों बढ़ाता है. पांडु औ शोथकों नाश करता
है. आयुष्यदायक है ॥ ३८ ॥

अथापक्वदोषाः ॥ देहेहितापंप्रकरोत्यपक्वता
रंविबंधंकिलशुक्रनाशं ॥ अपाटवंचैववलप्र
हानिमहागदान्पालयतीतिसत्यं ॥ ३९ ॥

टीका—अथ अपक्वदोष. अपक्व रौप्य भस्म देहमें
ताप, विबंध औ धातुका नाश, चातुर्य औ बलकी
हानि करता है. औ बडे रोगोंकी रक्षा करता है ॥ ३९ ॥

अथतच्छांतिः ॥ शर्करामधुसंयुक्तांसेवयेद्यो
दिनत्रयम् ॥ अपक्वरौप्यदोषेणविमुक्तःसुख
मश्नुते ॥ ४० ॥

टीका—अथ रौप्यदोषशांति. मिश्री औ मधु ती-
नि दिन खानेसें रौप्यविकार मिटै ॥ ४० ॥

अथानुपानं ॥ दाहेशर्करयायुक्तंवातेपित्तेवरा
युतं ॥ त्रिसुगंधयुतंमेहेगुल्मेक्षारसंमन्वितं ॥

टीका—अनुपान दाहमें शर्करायुक्त, वात औ पि-
तमें त्रिफलायुक्त, प्रमेहमें तज पत्र इलायचीके
चूर्णयुक्त, गुल्ममें क्षारयुक्त देना ॥ ४१ ॥

कासेकफेटरूपस्यरसेत्रिकटुकान्विते ॥ भा-
र्ग्विश्वयुतंश्वासेक्षयजित्सशिलाजतु ॥ ४२ ॥

टीका—कास औ कफमें त्रिकटु चूर्ण औ अरु-

तेके रसयुक्त, श्वासमें मारंगी सोंठीयुक्त, औ क्षयमें
शिलाजितयुक्त देना ॥ ४२ ॥

क्षीणेमांसरसेदेयंदुग्धेवाललनोत्तमे ॥ यकृ
त्प्लीहहरंकांतिवरापिप्पलिसंयुतं ॥ ४३ ॥

टीका—क्षीणतामें मांसका जूस अथवा दुग्धसं-
युक्त, यकृत् प्लीहामें त्रिफला औ पीपरीसाथ ॥ ४३ ॥

पुनर्नवायुतंशोफेपांडौमंडूरसंयुतं ॥ वलीप
लितहंकांतिक्षुत्करंघृतसंयुतम् ॥ ४४ ॥

टीका—शोथमें पुनर्नवासाथ, पांडूमें मंडूरयुक्त,
वलीपलितमें घृतयुक्त, क्षुधा औ कांतिकोंभी बढ़ाता
है ॥ ४४ ॥ इति रौप्यविधिः.

अथताम्रविधिः ॥ तत्रमारणयोग्यं
ताम्रं ॥द्विविधंताम्रंवैद्यैर्गदितंम्लेच्छं
तथैवनैपालम् ॥ छालनतोयच्छया
मंतन्म्लेच्छंरक्तमेवनैपालं ॥ ४५ ॥

टीका—अथ रौप्यविधिकथनानंतर ताम्रविधिः कह-
ते है. ताम्रकों वैद्योंने दोनप्रकारका कहा है. एक
म्लेच्छ, दूसरा नैपाल, जो मंजन करनेसे श्यामता
यकडता है सो म्लेच्छ, औ जो रक्तवर्ण रहता
है सो नैपाल ॥ ४५ ॥

त्याज्यंवालेम्लेच्छं ग्राह्यं नैपालकं हि
शुद्धतरम् ॥ शृणुत दोषान् शुद्धेशो
धनमपि सुप्रयत्नेन ॥ ४६ ॥

टीका—तिनमें शुद्ध नैपाल ग्रहण करना. औ
म्लेच्छकों त्यागना. हे शुद्धे, उस ताम्रके दोष और
शुद्धि सुनौ ॥ ४६ ॥

वांतिभ्रांतिविरेकत्वं क्लमस्तापस्तथैव च ॥
वीर्यहंतृत्वकंडुत्वेशूलंदोषाष्टकं रवौ ॥ ४७ ॥

टीका—वांति १, भ्रांति २, रेचनता ३, म्लानि ४,
ताप ५, वीर्यनाशकता ६, कंडू ७, शूल ८, ये आठ
दोष ताम्रमें सदा हैं. अब इन दोषोंको मिटानेके
वास्ते शोधन कहता हौं ॥ ४७ ॥

वक्ष्यमाणेषु द्रव्येषु तप्तं तप्तं विनिक्षिपेत् ॥
सप्तकृत्वः सुशुद्धः स्याद्रविरेवनसंशयः ॥ ४८ ॥

टीका—अगाड़ीके श्लोकनमें लिखेंगे जो द्रव्य
तिनमे तपाइ तपाइके बुझावै, सात सात बेर ती
शुद्ध होई ॥ ४८ ॥

तैलंतक्रंचगोमूत्रं वांतिह्न्याद्विचक्षणे ॥ कां
जिकंचकुलत्थांभोभ्रांतिह्न्यात्सुदारुणां ४९

टीका—तेल, मठा, गोमूत्र, वांति दोष दूरि करता है. कांजी औ कुलथीका काढा आंति दूरि करता है ॥ ४९ ॥

वज्रीदुग्धंचगोदुग्धंछमंहंतिविशेषतः ॥
चिंचांभोनिवनीरंचतापंपापंयथाहरिः॥५०॥

टीका—सेहुडथूहरका दूध और गोदुग्ध छम जो ग्लानि तिसकों मिटाता है. अमिलीका पानी औ निंबूका पानी तापकों हरता है ॥ ५० ॥

शीर्षिणोभस्तथाकन्यारसःशूलंनि
वारयेत् ॥ कंडुतांगोघृतंदुग्धंहंति
वृद्धायथावलम् ॥ ५१ ॥

टीका—सारिलका रस तथा घी कुमारीकास्वरस शूल निवारण करता है. कंडूताकों गोघृतयुक्त दूध हरता है ॥ ५१ ॥

हन्याद्वैवीर्यंहंतृत्वंद्राक्षाक्षौद्रंनितंविनि ॥
रेचतांसौरणंतीरंहंतिमस्तुतथैवहि ॥ ५२ ॥

टीका—वीर्यनाशकपणा द्राक्षा ओर मधु दूरि करे है. रेचनता सूरणका पानी औ दर्हीका पानी हरता है ॥ ५२ ॥

अथमारणं ॥ रविपत्राणितदर्धसूतं
खल्वेविमर्दयेद्भाढं ॥ निंबुजनीरैस्ता
वद्यावच्छुभ्राणितानिस्थुः ॥ ५३ ॥

टीका—अब मारण कहते हैं. ताम्र पत्र बहुत पतले
सुईसे छिदनेमाफिक करिके पत्रनसे आधे पारेके सा-
थ मर्दन करै. जहांतक सब पत्र श्वेत होई ॥ ५३ ॥

तद्विगुणं शुचिगंधधान्याम्लेन विमर्द्य
संलिपेत् ॥ पत्राणि हि दृढभांडे क्षिप्वा
संपूरयेत्सिकतया भूत्या ॥ ५४ ॥

टीका—तिनसे दूना शुद्ध गंधक, धान्याम्लमें
पीसिके लेपन करै. धान्याम्ल उसकों कहते है जो
यव निस्तुप करिके चारि पांच दिन पानीमें भि-
जोये राखै. जब खटा होइ तब कार्यमें लेइ. फिरि
ताम्र पत्र दृढ हांडीमें रखिके कमसे उपर वालू, रेत,
औ राख भरे ॥ ५४ ॥

रुध्वाशरावपुटके पश्चाद्भांडे विनिःक्षिपे
हलने ॥ मंदाग्निना विधयामैर्घियतेशु
त्वं नितं वविस्तारे ॥ ५५ ॥

टीका—पत्र सब पहिले दो सरावमें रखिके हांडीमें

धैरै फिरि रेती भस्म भरिके मुद्रा करिके चूल्हेपर मंदा-
ग्निसैं चारि पहर आंच देइ तौ ताम्र मरै ॥ ५५ ॥

पश्चात्तदर्थगंधंतद्भस्मनाविमर्दयेत्खल्वे ॥ सू-
रणतोयैर्देयंपुटंगजारख्यंततश्चवैपाच्यम् ५६

टीका—फिरि उस ताम्रभस्मसैं आधागंधक मि-
लाइ सूरणरसमें खरल करिके गजपुट देई ॥ ५६ ॥

चतुर्थींशेनगंधेनपंचगव्यैःपृथक्पृथक् ॥ पं-
चकृत्वःपुटेत्ताम्रमधुनासितयापुनः ॥ ५७ ॥

टीका—फिरि भस्मसैं चौथा भाग गंधक मि-
लाइ न्यारा न्यारा गोदुग्ध, धृत, दही, मठा, मूत्रमे
खरल करि करि न्यारी न्यारी पुटै देई. फिरि मधु
याने सहतके साथ उसी रीतिसैं फिर शकरके साथ
बैसेही पुट देई ॥ ५७ ॥

सेवितंचेद्यदावांतिविधत्तेभावयेत्पुटेत् ॥ गो-
क्षीरेणततःशुद्धंशिखिग्रीवनिभंभवेत् ॥ ५८ ॥

टीका—फिर जो खानेसैं वांति करावै तौ गोदु-
ग्धकी पूट दैके आंच दे जव शुद्ध मोरकी गरदनीका
रंग होई तौ श्रेष्ठ है ॥ ५८ ॥

अथान्यः ॥ ताम्रपत्रसमंसूतंगंधम

म्लेनमर्दयेत् ॥ तेनसंलिप्यपत्राणि
शरावपुटकेदहेत् ॥ ५९ ॥

टीका—अथ दूसरा प्रकार. ताम्रकी वरोवर गंधक पारा खटाईसँ मर्दन करिके पत्रोंके लेपन करिके गजपुट देई ॥ ५९ ॥

गजाव्हैस्त्रिपुटैरेवंपंचताजायतेध्रुवम् ॥ चल
कुंडलशोभाढ्येपीनोत्तुंगपयोधरे ॥ ६० ॥

टीका—ऐसे तीन पुटसँ भस्म होता है ॥ ६० ॥

अथान्यः ॥ तुर्यांशेनशिवेनैवताम्रप
त्राणिलेपयेत् ॥ अम्लपिष्टबलिंदद्या
दूर्ध्वाधोद्विगुणंततः ॥ ६१ ॥

टीका—अथ तीसरा प्रकार. ताम्रपत्रसँ चौथे भाग पारेसँ ताम्रपत्र लेपन करिके तिनसँ दूना गंधक खटाईमें पीसीके नीचे उपर रखिके ॥ ६१ ॥

चांगेरीकल्कगर्भेतद्यामंस्थाल्यांविपाचयेत् ॥
पंचत्वंजायतेशुल्वंसर्वरोगहरंभवेत् ॥ ६२ ॥

टीका—लोणीकी लुगदीमें रखिके हांडीमें एक पहरकी तेज आंच देई तौ भस्म होई इति ॥ ६२ ॥
अथसामान्यभस्मगुणाः ॥

तंलीहानमुदरं कृमीन् ॥ कुष्ठं शूलं ज्वरं तंद्रां व
मिश्रोफं च पांडुतां ॥ ६३ ॥

टीका—अथ सामान्य भस्मगुणः कास, श्वास,
कफ, प्लीहा, वात, उदररोग, कृमी, कुष्ठ, शूल, ज्वर,
आलस्य, छर्दि, शोफ, पांडुरोग ॥ ६३ ॥

मोहमशोतिसारं च क्षयं गुल्मं शिरोव्यथाम् ॥
हिक्कां मेहं भ्रमं हंति रविर्वह्निर्विवोधयेत् ॥ ६४ ॥

टीका—मूर्च्छा, अर्शरोग, अतिसार, क्षय, गुल्म,
शिर, दर्द, हिचकी, प्रमेह, भ्रमः इतने रोगोंको हरता
है औ भूख बढ़ाता है ॥ ६४ ॥

अथापक्वदोषाः ॥ ताम्रमपक्वं मनं विरेक
तापादिकं भ्रमं मूर्च्छां ॥ मेहं वलस्य नाशं करोति
शुक्रस्य चायुषश्चापि ॥ ६५ ॥

टीका—अथ अपक्वदोषः अपक्वा ताम्रभस्मः व-
मन, विरेचन, ताप, भ्रम, मूर्च्छा, प्रमेह, वलका नाश,
वीर्य औ आयुष्यकामी नाश करता है ॥ ६५ ॥

अथ दोषशान्तिः ॥ मुनिव्रीहिसितापानं वाधा
न्याकंसितांचकैः ॥ ताम्रदोषमशोषं वैपिव
न्हन्यादि न त्रयात् ॥ ६६ ॥ कैः जलैरित्यर्थः ॥

टीका—अथ ताम्रदोषशान्ति कहते हैं. तिन्नी अथवा धना, शकर जलसें तिनि दिन पियै तौ ताम्रदोषसें छूटै ॥ ६६ ॥

अथानुपानं ॥ पिप्पलीमधुसंयुक्तं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ स्वबुद्ध्यापि प्रयुंजीत रोगनाशन वस्तुभिः ॥ ६७ ॥

टीका—अथ अनुपान. पीपरी सहित संग सब रोगमे देइ अथवा आपकी बुद्धिमाफिक रोगनाशक वस्तुसाथ देइ तौ रोग जाई ॥ ६७ ॥

अथ नागविधिः ॥ पूर्वतच्छोधनं ॥ कुमारी स्वरसेवापिवराकथे सुगालयेत् ॥ तत्संततं सप्तकृत्वो नागः शुद्धतरो भवेत् ॥ ६८ ॥

टीका—अथ नागविधि कहते हैं. तत्र प्रथम शोधन कहते हैं. धीकुमारिपाठाके रसमें वा त्रिफलाके कपायमें सात बेर गलाइके बुझावै तौ नाग शुद्ध होई ॥ ६८ ॥

तालकस्वरसेवारानूचत्वारिंशद्विगालयेत् ॥ तत्संततं विशुद्धे तनागो नागोऽद्रणापि ॥ ६९ ॥

टीका—अथवा तालीमें चालीश बार बुझावै तौ शुद्ध होई ॥ ६९ ॥

अथमारणं ॥ खर्परेनिहितंनागरवि
मूलेनघट्टयेत् ॥ यामत्रिकैर्भवेद्भस्मह
रिद्वर्णमदूषणम् ॥ ७० ॥

टीका—अथ मारण. माटीके कूंडेमें सीसा रखिके
चुल्हेपर आंच देइ औ आंकडेकी जडसें चलताजाय
तो तीनि पहरमें हारांग भस्म होता है ॥ ७० ॥

अथान्यः ॥ मर्दितोवृषतोयेननागः
कुंभपुटैस्त्रिभिः ॥ सशिलोन्मियतेस
त्यंसर्वरोगहरोभवेत् ॥ ७१ ॥

टीका—प्रकारदूसरा—सीसाकी बरोबर मैनशिल
मिलाइ अरुसाके रसमें मर्दन करि एक घडेमें बहूतसे
छिद्र करि कोइला आधा घडा भरी बीचमें संपुटमें
सीसा रखिके उपर फिरि कोइला भरिके अग्नि
देवै, ऐसे तिनिवारमें भस्म होता है ॥ ७१ ॥

अन्योपि ॥ भूलताऽगस्तिपत्राणिपिष्ट्वा
पात्रं विलेपयेत् ॥ वासापामार्गजंक्षारंत
त्रनागेद्रुतेक्षिपेत् ॥ ७२ ॥ गुरुक्तित
श्रुतुर्थीशंवासादव्याविघट्टयेत् ॥ यामैके
नभवेद्भस्मततोवासारसान्वितं ॥ मर्दये
त्संपुटेत्स्याद्वैनागसिंदूरकंशुभं ॥ ७३ ॥

टीका—तीसरा प्रकार. कचुवा औ अगस्तरेक्ष-
के पत्र पीसिके पात्रमें लेपन करि ऊपर सीसा धरि
चूल्हेपर चढावै, जब सीसा गलै तब अरुसा औ
अपामार्गका क्षार सीसासैं चौथा भाग डारता जाई
औ अरुसाकी मोटी लकड़ीसैं चलाता जाइ तौ एक
पहरमें भस्म होइ फिरि अरुसाके रसमें खरल करि
गजपुट देइ तौ लाल भस्म होई ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अथान्यः ॥ शुद्धनागंसमादायद्विगुणा
चमनःशिला ॥ पलाशदारुणासम्यग्घर्ष
येत्खर्परेशुभे ॥ ७४ ॥

टीका—चौथा प्रकार. शुद्ध शिस्तासैं दूना मैनशील
खरपरेपरमें चढाइ. पलासकी लकड़ीसे चलावै औ
तीव्र आंच देइ तौ भस्म होई ॥ ७४ ॥

तीक्ष्णाग्निनामृतं नागंतुर्यांशांचमनःशिलां ॥
तांबूलस्वरसैर्मर्द्यशरावेपुटकेपुटेत् ॥ द्वात्रिं
शतिपुटेरेवं नागभूतिर्भवेद्भुवम् ॥ ७५ ॥

टीका—फिरि चौथे भागकी मैनशील मिलाइके
नागवेलीके पानके रसमें घोटिके पुट देइ ऐसे ३२
वत्तीस पुठमें भस्म होता है ॥ ७५ ॥

भागैकमहिफेनस्थनागभागचतुष्टयं ॥ घष

णान्निवकाष्ठेनमंदवन्हिप्रदानतः ॥ नागभू
तिर्भवेच्छेतावीर्यदार्व्यकरीमता ॥ ७६ ॥

टीका—पांचमा प्रकार. सीसासैं चौथा भाग अफीम
खपरेमें दोनोंको आंच देइ औ निवूकी लकडीसैं चला-
ता जाइ तौ श्वेतभस्म होइ. खानेसैं वीर्य दढ करै ॥ ७६ ॥

अथनागेश्वरविधिः ॥ पलद्वयंमृतंनार्गं
हिंगुलंचपलद्वयं ॥ शिलाकर्पमिताग्रा
ह्यासर्वतुल्यंहिगंधकं ॥ ७७ ॥ निंबुनीरे
णसंमर्द्यततोगजपुटेपुटेत् ॥ तदानागे
श्वरोऽयंस्यान्नगराजसुतोपमे ॥ ७८ ॥

टीका—अथ नागेश्वरविधि. सीसाभस्म तोला
आठ, हिंगुलू तोला आठ, मनसील तोला एक,
गंधक तोला सत्तरह निवूके रसमें खरल करि गज-
पुट देइ तौ नागेश्वर होता है ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

अथसामान्यगुणाः ॥ वातरोगंक्षयंगुल्मंपां
डुश्चलभ्रमानूकफम् ॥ वह्निमांद्यंशुक्रदोषंका
साशोऽग्रहणीकृमीन् ॥ ७९ ॥ अपमृत्युंनिहंत्या
शुशतनागसमंबलम् ॥ ददातिचायुपोवृद्धिं
चेत्कृतंविधिनाप्रिये ॥ ८० ॥

टीका—अथ नागविधिकथनानंतर वंगकी विधि कहते हैं, प्रथमं तत्र वंगपरीक्षा, श्वेत औ कठिन देखिके लेइ, अन्यमें ओर धातु मिलि है सो त्याज्य है ॥ ८७ ॥

अथमारणं ॥ वंगतुल्यंवराचूर्णनिंवकाष्ठे
नघर्षयेत् ॥ स्वर्परेभस्मतांयातंसर्वकार्येषु
योजयेत् ॥ ८८ ॥

टीका—अथ मारणं, रंगिकी बरोबर त्रिफलाचूर्ण स्वपरेमें चढाई निंवके सोठेसें घोटै, जब भस्म हो तब सर्व कार्यमें युक्त करै ॥ ८८ ॥

अथान्यः ॥ वंगपादांशतोत्राह्यमपामार्ग
भवंरजः ॥ स्थूलाग्रयालोहद्व्यास्वर्परेतं
विघट्टयेत् ॥ ८९ ॥ शनैर्भस्मत्वमायाति
तावन्मर्द्यपुनःशनैः ॥ एकत्रचततःकृत्वा
यावदंगारवर्णतां ॥ ९० ॥ भजेत्पश्चाच्छ
रावेणनूतनेनविरोधयेत् ॥ ततस्तीव्राग्नि
संपक्वंगंभूतित्वमाप्नुयात् ॥ ९१ ॥

टीका—दूसरी विधि, वंगका चौथा भाग अपा-
मार्ग जिसको लट्जीरा औ चिरचिरा औ अद्धा
झारो औ अघेडामी कहते हैं, सो स्वपरेमें अग्निप

चढाई बडी लोहकी करछीसैं घोटता जाई. धीरे
धीरे घोटनेसैं जवतक भस्म न होई तवतक घोटना.
फिरि एक जगह करिके खूब आंच देई. जब लाल
अग्निसरीखा होई तव शीतल करि शरावसंपुटमें
गजपुट देई तौ श्वेतभस्म होई ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥

अथ वंगेश्वरविधिः ॥ भागचतुष्कंवंगमृतं हि
शंखरसंविभागैकम् ॥ पृथग्विकं हरितालं कां
जिकपिष्टं शरावसंपुटके ॥ ९२ ॥ पुटेद्वजा
ख्येयंत्रे घनकुचयुग्मे निशेशमुखिवाले ॥ वंगे
श्वरोऽयमवलेबलदोनृणां हिरसिकानां ॥ ९३ ॥

टीका—अथ वंगेश्वरविधिः. वंगभस्म चारि तोला,
शंखभस्म एक तोला, पाराभस्म एक तोला, हरि-
ताल दो तोला, कांजीमें पीसिके शरावसंपुटमें ग-
जपुट देई तौ वंगेश्वर होई ॥ ९२ ॥ ९३ ॥

अथ सामान्यगुणाः ॥ श्वसनमेहसमीरण
नाशनः प्रदरशूलयकृत्कफपांडुहृत् ॥ अ
मवमिक्षयजिह्वलर्वीर्यकृत् सकलरोगहरः शु
चिवंगकः ॥ ९४ ॥

टीका—अथ साधारणगुण. श्वास, प्रमेह, प्रदर,

शूल, यकृत, कफ, पांडु, भ्रम, उलटी, क्षय, सर्व रोगनाशक औ बल वीर्यका बढ़ानेवाला है ॥ १४ ॥

अथ वंगेश्वरगुणाः ॥ भ्रमतिमिरकफप्रमेह
कासान्ध्रसन्पवनपित्तरक्तदोषान् ॥ अ
ह्मणिगदसशूलकुष्ठपांडुज्वरगदमपिहन्ति वं
गराजः ॥ १५ ॥

टीका—अथ वंगेश्वरके गुण. भ्रम, तिमिर, कफ, प्रमेह, कास, श्वास, वात, पित्त, रक्तदोष, संग्रहणी, शूल, कुष्ठ, पांडु, ज्वर इन रोगोंको हरे ॥ १५ ॥

अथापक्वदोषाः ॥ यद्यपक्वमवेद्वंगगुल्मकुष्ठ
प्रमेहकृत् ॥ वातशोणितमंदाग्निपांडुदौर्ब
ल्यरूक्षप्रदम् ॥ १६ ॥

टीका—अथ अपक्व दोष. अधपक्वा वंग गुल्म, कुष्ठ, प्रमेह, वात, रक्त, मंदाग्नि, पांडु, निर्वलता इतने रोग करता है ॥ १६ ॥

अथ तच्छान्तिः ॥ मेषशृंगीसितायुक्तां
यः सेवति दिनत्रयम् ॥ वंगदोषविमु
क्तोऽसौ सुखं जीवति मानवः ॥ १७ ॥

टीका—अथ वंगदोषकी शान्ति. जो मनुष्य मेढा-

शिंगी शकरसंग तीनि दिन सेवन करै तौ वंगवि-
कार शांति होई ॥ ९७ ॥

अथानुपानं ॥ कर्पूरेणयुतंवंगंहरत्यास्य
विगंधतां ॥ पौष्टिकेक्षीरसंयुक्तंजातीफ
लयुतंतुवा ॥ ९८ ॥

टीका—अथ अनुपान. कपूरसाथ वंग सेवन क-
रनेसें मुखदुर्गंध हरता है. दूधसंग वा जायफलसंग
पुष्ट करता है ॥ ९८ ॥

प्रमेहेतुलसीपत्रैःखादेद्वंगंप्रसन्नधीः ॥ गुल्मे
टंकणसंयुक्तंपांडुरोगेघृतेनच ॥ ९९ ॥

टीका—प्रमेहको तुलसीपत्रसें, गुल्ममें टंकणक्षा-
रसंग, औ पांडुरोगमें घृतसंग ॥ ९९ ॥

ऊर्ध्वश्वासेरक्तपित्तेनिशयाभक्षयेत्सुधीः ॥ पि
त्तेशर्करयाखादेन्मधुनावलवृद्धये ॥ १०० ॥

टीका—ऊर्ध्वश्वास औ रक्तपित्तमें हलदीसंग, पि-
त्तमें शकरसंग, वलवृद्धीके वास्ते मधुसंग ॥ १०० ॥

वीर्यस्तंभायकस्तूर्यानागवल्लिदलेनवा ॥ मं
दाशौमगधाचूर्णकस्तूरीसंयुतंभजेत् ॥ १ ॥

कंकोलस्यरजोयुक्तंमंदाशौवाभजेन्नरः ॥ ख

दिरक्वाथसंयुक्तं वर्त्मरोगे प्रशस्यते ॥ २ ॥

टीका—वीर्यस्तंभनकेवास्ते कस्तूरी वा पानसंग,
मंदाग्नीमें पिपरी औ कस्तूरीसंग, अथवा ककोल चू-
रणसंग, नेत्रके पंकलरोगमें खैरके काढेमें ॥ १ ॥ २ ॥

धात्रीफल्युतं वापि पूगचूर्णसमन्वितम् ॥ से-
वितं हरतेऽजीर्णरसोनेनास्थिगं ज्वरम् ॥ ३ ॥

टीका—अजीर्णमें आमला वा सुपारीसंग, हाड-
गत ज्वरमें लहसनसंग ॥ ३ ॥

कुष्ठे सिंधुफलैः सार्धं निर्गुंडीस्वरसेनवा ॥ कौ-
ब्जे पामार्गमूलेन श्लिष्टं कणसंयुतम् ॥ ४ ॥

टीका—कुष्ठरोगमें समुद्रफल वा निर्गुंडीके त्व-
रसमें, कूवररोगमें, अपामार्गकी जड़में, औ श्लीहारो-
गमें टकणक्षारसंग ॥ ४ ॥

दिव्यसमुद्रफलाभ्यां वंगं संमर्द्य नागवल्लिज-
लैः ॥ प्राणप्रिये विलिपति नायदिलिङ्गं भवे-
द्विदीर्घतरम् ॥ ५ ॥

टीका—लवग औ समुद्रफलसाथ बग नागवे-
लीके पत्ररससें मर्दन करिके लिङ्गमें लेप करे तो
लिङ्ग बड़ा होई ॥ ५ ॥

लवंगरोचनायुक्तंतिलकंजनवश्यकृत् ॥ लवंगै
रंडमूलाभ्यांलेपश्चाद्वावभेदके ॥ ६ ॥

टीका—लवंग औ गोरोचनसाथ तिलक करै तौ
जन वश्य होइ. लवंग औ एरंडमूल साथ लेप करै
तौ अर्द्धावभेद याने अधासीसी जाइ ॥ ६ ॥

यवानिकायुतंवातेवाजिगंधायुतंतुवा ॥ जलो
दरेप्यजाक्षीरसंयुतंगुणकृद्भवेत् ॥ ७ ॥

टीका—वातरोगमें अजमा वा असगंधसंग, ज-
लोदरमें बकरीके दूधसंग ॥ ७ ॥

पुत्राप्त्यैरासभीक्षीरैस्तक्राढ्यंवातगुल्मनुत् ॥
कर्कटीस्वरसैःषण्डोपुरुषत्वमवाप्नुयात् ॥ ८ ॥

टीका—पुत्रप्राप्तीकेवास्ते गधीके दूधमें, वातगु-
ल्ममें मठासंग, नपुंसककों काकडीके रसमें ॥ ८ ॥

अपामार्गरसैर्वगंशिरोरोगनिवारणम् ॥ शा
लुकमालतीपत्रीलवंगैर्धातुदोषनुत् ॥ ९ ॥

टीका—मस्तकरोगमें अपामार्गके रसमें, धातुवि-
कारमें जावत्री जायफल लवंगसंग ॥ ९ ॥

जातीफलश्वगंधाभ्यांकटिपीडानिवारणं ॥ र
सोनतैलयुग्नस्यमपस्मारनिपूदनम् ॥ ११० ॥

टीका—कटिपीठामें जायफल औ असगंधसंग,
अपस्मारमें लहसुन औ तेल युक्तनास देना ॥११०॥

जातीफललवंगालवंगमधुनाकसनंजयेत् ॥ स्व
रसास्वरसैर्वंगवलदंहिन्वृणामिदम् ॥ ११ ॥

टीका—कासमें जायफल लवंग मधुसंग, अथवा
तुलसीरससैं सेवन किया मनुषको बल देता है ॥११॥

अथजसद्विधिः ॥ तच्छोधनंवंगवत् ॥ अ
थमारणं ॥ जसदस्यतुपत्राणिकृत्वासूक्ष्मत
राणिच ॥ तत्पादांशौशिलागंधावर्कदुग्धवि
मर्दितौ ॥ १२ ॥ लेपयेत्तेनपत्राणिशरावा
भ्यानिरोधयेत् ॥ गजान्हेसंपुटेदेवंद्वादशौर्ध्व
यत्तेपुटैः ॥ १३ ॥

टीका—अथ जसद्विधिः तत्र शोधनं वंगवत्. अथ
मारणं. जसदके सूक्ष्म पत्र करे. तिसका चांधा भाग
मनसील औ गंधक आंकडेके दूधमें खरल करि पत्रों-
के लेप करि शरावसंपुटमें गजपुट देई. ऐसे बारह
पुटमें शुद्ध भस्म होता है ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथान्यःप्रकारः ॥ जसदस्यचतुर्थीशंपारद
गंधकंप्रिये ॥ मर्दयेत्त्वल्बकेसम्यक्कन्यानिव

रसैः पृथक् ॥ १४ ॥ लेपयेत्तेन पत्राणि गजा
व्हेपाचयेत्पुटे ॥ एवमेकपुटेनैव भस्मसाज्ज
सदं भवेत् ॥ १५ ॥

टीका—अथ दूसरी विधि. जसदपत्रके चौथा भाग
पारा औ गंधक धीकुमारपाठेके रसमें खल करि फिरि
निंबूके रसमें खरल करि पत्रोंके लेप करि शराब संपुटमें
गजपुट दे तौ एक पुटमें भस्म होई ॥ १४ ॥ १५ ॥
मारयेद्वंगवद्वापि नागवद्वाविचक्षणे ॥ तेन
भस्मत्वमायातिसर्वकार्यकरं भवेत् ॥ १६ ॥

टीका—अथवा वंग वा सीसाकी रीतिसें मारे
तो मरै ॥ १६ ॥

अथ सामान्यगुणाः ॥ त्रिदोषप्रमेहाग्निमांघ्रा
क्षिरोगानतीसारपित्तज्वराजीर्णकासान् ॥ वि
बंधामवातंहरेद्रीतिहेतुर्वमिशूलसीतज्वरास्त्र
स्तुतीश्र ॥ १७ ॥

टीका—अथ साधारणगुण. त्रिदोष, प्रमेह, अग्नि-
मांघ, नेत्ररोग, अतिसार, पित्तज्वर, अजीर्ण, कास,
बिबंघ, आमवात, वांति, शूल, शीतज्वर, रक्ताति-
सार इनको नाश करै ॥ १७ ॥

अथापक्वदोषाः ॥ अपक्वजसदं रोगान् प्रमेहा
जीर्णमारुतान् ॥ वमिंभ्रमं करोत्येनं शोधये
न्नागवत्ततः ॥ १८ ॥

टीका—अथ अपक्व दोष. अपक्व जसद प्रमेह, अ-
जीर्ण, वात, वांति, भ्रम, इनको पेदा करता है ॥ १८ ॥

अथ शांतिः ॥ बालाभ्यां सितायुक्तां सेवयेद्यो
दिनत्रयम् ॥ जसदस्य विकारोऽस्य नाशमाया
तिसत्वरम् ॥ १९ ॥

टीका—अथ शांतिः. बालहरड शकरसंग तीनि
दिन सेवन करे तो जसद विकार जाई ॥ १९ ॥

अथानुपानं ॥ जसदं भिषजां वसुदं ललने प्रव
वदाम्यनुपानमहं सुखदम् ॥ त्रिसुगंधयुतं भ
सितं ह्यशितं त्रिमलोद्भवमाशुनिहंति गदं २०

टीका—अथ अनुपान. तज तमालपत्र, इलायची-
साय जसद त्रिदोषका नाश करता है ॥ १२० ॥

अग्निमंथरसैर्हतिवन्हिमाद्यंदुरासदं ॥ नेत्र
रोगंगवाज्येन जीर्णैर्नैवांजने कृते ॥ २१ ॥
अथ बालालया प्रातर्नेत्ररोगं हि व्युष्टया ॥ अ

हिवल्लिदलोत्पन्नवीटकेनप्रमेहनुत् ॥ २२ ॥

टीका—अग्निमांशमें अरनीके रसमें, नेत्ररोगमें जीर्ण गोधृतसें अंजन करै अथवा बासी थूकसें अंजन करै. प्रमेहमें पानके बीडासाथ खाई ॥ २१ ॥ २२ ॥

सतंडुलहिमैर्हतिखर्जूरैर्मायुजज्वरम् ॥ यवानिकालवंगाभ्यांयुतंशीतज्वरंजयेत् ॥ २३ ॥

टीका—पित्तज्वरमें चावलका हिम औ खजूरमें शीतज्वरमें अजमायन लवंग साथ ॥ २३ ॥

खर्जूरतंडुलहिमैरक्तातीसारनाशकृत् ॥ शर्कराजिसंयुक्तमतीसारंविमंजयेत् ॥ २४ ॥

टीका—खजूर औ चावलके हिमसें रक्तातिसार जाई. अतिसार औ वांतीमें जीरा शकर साथ ॥ २४ ॥

यवानिकालवंगजीरकैःसशर्करैःशिवायुधा
रूपमामयंनिहन्तिवामलोचनेप्रिये ॥ यवानिकाकवोष्णानीरसंयुतंविबंधनुत्तथामवातनु
यवानिकालवंगसंयुतं ॥ २५ ॥

टीका—शूलरोगमें अजमायन लवंग जीरा शकर-संग, विबंधरोगमें अजमायन औ गरम जलसंग, आमवातमें अजमायन लवंगसंग ॥ २५ ॥

महिषीनवनीतेन प्रमेहं जयति ध्रुवं ॥ वल्लं प
ध्ये च गोधूमकर्पटी घृतसंयुता ॥ २६ ॥

टीका—प्रमेहमें हैसके माखनसंग तीनि रति सेवन
करे, पथ्यमें फकत गेहूकी भौरीया जिसको अंगाकडी
औ वाटोभी कहते हैं सो घृतयुक्त खाई ॥ २६ ॥

यवानिकालवंगाम्भ्यामजीर्णकोष्ण
नीरयुक् ॥ मधुपिप्पलिसंयुक्तं का
संजयतिसत्वरम् ॥ २७ ॥

टीका—अजीर्णमें अजमायन, लवंग औ गरम
जल संग, कासमें मधु पिप्पलीसंग लेइ तौ शीघ्र
कास जाइ ॥ २७ ॥

अथ लोहविधिः ॥ तत्र लोहपरीक्षा ॥ वामोरु
त्रिविधं लोहं प्रवदंति भिषग्वराः ॥ कांतं ती
क्ष्णं तथा मुंडं दिव्यमध्याधमं क्रमात् ॥ २८ ॥

टीका—अथ लोहविधिः. तत्र परीक्षा. लोह तीनि
प्रकारका है. कांत, तीक्ष्ण, मुंड; क्रमसँ दिव्य, मध्य,
अधम है ॥ २८ ॥

कांतं श्रेष्ठतमं ग्राह्यं कांताभावे तु तीक्ष्णकं ॥ मुं
डकं सर्वथा त्याज्यं यतो दोषा हि मुंडके ॥ २९ ॥

टीका—सर्वमें कांत श्रेष्ठ है. कांत न मिले तो तीक्ष्ण
औ मुंडकों सर्वथा त्याग करना दूषित है इसर्ते ॥ २९ ॥
चतुर्धाकांतमप्याहूरोमकंभ्राजकंप्रिये ॥ चुंब
कंद्रावकंतेषांगुणाज्ञेयायथोत्तरं ॥ १३० ॥

टीका—कांतभी चारि प्रकारका है. रोमक, भ्राजक,
चुंबक, द्रावक यथोत्तर एकसें एक श्रेष्ठ है ॥ १३० ॥
ताम्रवच्छोधयेल्लोहंविशेषात्रैफलेजले ॥ त्र
योदशपलान्नोर्ध्वैतथापंचपलादधः ॥ ३१ ॥

टीका—लोहकी शुद्धि ताम्रवत् है. विशेष त्रिफ-
लामें सात बेर बुछाना तेरह पलसें जादा न करना.
पांच पलसें नीचा करना ॥ ३१ ॥

अथमारणं ॥ मृदुमध्यखरैर्भेदैर्लोहपाकस्त्रि
धामतः ॥ शुष्कपंकसमौपूर्वौसिकतासदृशः
खरः ॥ ३२ ॥

टीका—अथ मारण. मृदु मध्य खर भेदकरिके
लोहपाक तीनि प्रकारका है. सूखा कीच-सरीखा मृदु
औ मध्य है. वालुरेतसरीखा खर है ॥ ३२ ॥

गंधलिप्तमयःपत्रंवन्हौतत्तंपुनःपुनः ॥ मीना
क्षीस्वरसेक्षिप्त्वायावत्तन्नोविशीर्यते ॥ ३३ ॥

ततःपारदगंधेनतुल्याशंमर्दयेद्वितत् ॥ मी
नाक्षीवृषनिर्गुडीरसैर्गजपुटान्मृतिः ॥ ३४ ॥

टीका—गंधक खटाइसँ लेपन करिके अग्निमें तप्त करिके छभीके रसमें बुझाता जाई. जहांतक पत्र फुटै नहीं. फिर पत्रके समभाग पारा गंधक मिलाई माछभी और निर्गुडीके रसमें घोटि गजपुट देइ तौ लोह मरै ॥ ३४ ॥

अथान्यःप्रकारः ॥ अयश्चूर्णवराकाथेकृत्वा
गोलंपुनःपुनः ॥ गतेनिर्वातकेदेशेषोडशांगु
लसंमिते ॥ ३५ ॥ पुटंदत्वाप्रत्यत्नेनचतुः
षष्टिपुटैरयः ॥ भस्मीभूतंविशालाक्षिपद्मरा
गनिभंभवेत् ॥ ३६ ॥

टीका—अथ दूसरा प्रकार. शुद्ध लोहका चूरण त्रि-
फलाके काढेमें घोटिके संपुटमें रखिके सोलह अंगुल
गेहिरे खाढेमें पुट देइ ऐसे चौपटि ६४ पुट देई तौ
पद्मरागतुल्य रंग लोहभस्म होता है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथान्यः ॥ भागैकंपारदंकांतेद्विभागंगंध
कंशुचिम् ॥ तयोस्तुल्यमयश्चूर्णमर्दये
त्कन्यकाद्रवैः ॥ ३७ ॥ यामद्वयमितंप

श्यात्स्थापयेत्ताम्रभाजने ॥ व्याघ्रपत्रैः
समाच्छाद्ययदोष्णं प्रहरद्वयात् ॥ ३८ ॥
स्थापयेच्च ततः पश्चाद्धान्यराशौ दिनत्रयं ॥
ततः संमर्दयेद्वाढमेवंवारितरं भवेत् ॥ ३९ ॥

टीका—अथ तिसरा प्रकार. एक भाग पारा, दो भाग गंधक, तीन भाग लोहचूरण, घीकुमारपाठके रसमें खरल करि ताम्रके पात्रमें रखिके उपरसें एरंड-का पत्र ढकिके तीव्र सूर्यके तापमें दोपहर रखी देइ जब उष्ण होई तब अन्नकी राशीमें रखी छोड़े. दिन तीन पाछे निकासि खरल करै. पानीपर तिरैगा तब जान की भस्म भया ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अथ सामान्यगुणाः ॥ मृगविलोचनिकुंजर
गामिनिशृणुवदाम्ययिलोहगुणानहं ॥ सुवि
धिमारितमेव हरत्ययः कृमिसमीरणपांडुविष
ज्वरान् ॥ १४० ॥ अमवमिश्वसनग्रहणीग
दान् कफजराकसनक्षयकामलाः ॥ अरुचि
पीनसपित्तप्रमेहकान् गुदजगुल्मरुगामसमी
रणान् ॥ ४१ ॥

टीका—अथ साधारण गुण. कृमिरोग, वातरोग,

पांडु, विष, ज्वर, भ्रम, वांति, श्वास, सग्रहणी, कफ, जरा, कास, क्षय, कामला, अरुची, पीनस, पित्त, प्रमेह, अर्श, गुल्म, आमवात जाते हे ॥ ४० ॥ ४१ ॥

प्लीहस्थौल्यविनाशनंवलकरंकांताजनानं
ददंक्षीणत्वंविधुनोतिदृष्टिजनकंशोफापहं
कुष्ठनुत् ॥ भक्तंशुद्धरसेंद्रसंयुतमिदंस
र्वामयध्वंसनंकांताच्छ्रेष्ठरसायनंनहिपरं
कांतेऽस्तिविंवाधरे ॥ ४२ ॥

टीका—प्लीह, स्थूलता इनरोगोंको हरे. बलकों बढावे, स्त्रीको सुख देइ. क्षीणता मिटावे. दृष्टि निर्मल करे. सोजा दूर करे. कुष्ठ हरे. जो शुद्ध पारेसंग सेवन करे तो सर्व रोग जाई. लोहसें श्रेष्ठ ओर रसायन है नहीं ॥ ४२ ॥

अथापक्वदोषाः ॥ विषंक्लेदंकरोत्येवंवी
र्यैकांतिनिहंतिच ॥ अपक्वंहियतोलोहं
ततःसम्यग्विपाचयेत् ॥ ४३ ॥

टीका—अथापक्वदोष. अपक्व लोह विष औ जी-मतिलाना पेदा करे. वीर्य औ कांतिकों नाश करे. इसवास्ते शुद्ध भस्म लेइ ॥ ४३ ॥

अथशांतिः ॥ खंडमाक्षिकसंयुक्तमेलचूर्णोदि
नत्रयम् ॥ विकारोलोहजस्तस्यभुक्त्वानाशंस
माप्नुयात् ॥ ४४ ॥

टीका—अथ लोहविकारशांतिः. खांड औ मधु
साथ इलायचीचूर्ण तीन दिन सेवन करे तो लो-
हविकार जाइ ॥ ४४ ॥

अथान्यः ॥ सिंधूत्थं त्रिवृताचूर्णं सेवितं कोष्ण
वारिणा ॥ लोहजा विकृतिस्तस्य विनश्यति
न संशयः ॥ ४५ ॥

टीका—अथ अन्यप्रकार. सैधव लवण औ निशोत्तर
चूर्ण गरम जलसें पिये तो लोहविकार जाइ ॥ ४५ ॥

अन्यच्च ॥ सितयामधुना वापिश्वेतदू
र्वारसं पिबेत् ॥ विकारं लोहजं त्यक्त्वा
सुखमेव हि जीवति ॥ ४६ ॥

टीका—अथवा दूर्वारस शकर वा मधुसंग पिये
तो लोहविकार जाइ ॥ ४६ ॥

अथ लोहयोनि रक्षामंत्रः ॥ ॐ अमृतोद्गवाय
फट् ॥ अथ लोहमर्दनमंत्रः ॥ ॐ अमृतोद्ग
वाय स्वाहा ॥ अथ वलिदानमंत्रः ॥ ॐ नमश्च

डवजपाणयेमहायक्षसेनाधिपतयेकुरुकुरुम
हाविद्याविलायस्वाहा ॥ अथभक्षणमंत्रः ॥
ॐ अमृतं भक्षयामि स्वाहा ॥ इति मंत्राः ॥ अथा
नुपानं ॥ रसराजयुतं लोहं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
भाङ्गी त्रिकटुकक्षौद्रयुतं धातुविकारनुत् ॥ ४७ ॥

टीका—अथ लोहयोनिरक्षामंत्रः. ओं अमृतोद्भवाय फ-
ट्. अथ लोहमर्दनमंत्रः ओं अमृतोद्भवाय स्वाहा. अथ
बलिदानमंत्रः ओं नमश्चण्डवज्रपाणये महायक्षसेनाधि-
पतये कुरु कुरु महाविद्याविलाय स्वाहा. अथ भक्षण
मंत्रः अमृतं भक्षयामि स्वाहा. इति मंत्राः अथानुपानं.
सर्व रोगमें लोहभस्म पारासंग देना. धातुविकारमें भारं-
गमूल, गुंठी, मिरच, पिपरी, मधुसंग देना ॥ ४७ ॥

रसगंधयुतं लोहं माक्षिकेण कफप्रणुत् ॥ चातु
र्जातसितासार्धरक्तपित्तं जयेत्सुधीः ॥ ४८ ॥

टीका—कफरोगमें पारा, गंधक, मधुसंग रक्तपित्तमें
तज, पत्र, दलायची, नागकेशर, शङ्खरसंग देना ॥ ४८ ॥
पुनर्भूरजसायुक्तं गोदुग्धेन बलप्रदं ॥ काये
पौनर्नवे पांडुं खंडयेत्लोहमेवाहि ॥ ४९ ॥

टीका—बलरक्षिकेवास्ते पुनर्नवाके चूर्ण औ गा-

टीका—अथ मंडूरविधि, जो गुण लोहमें है सो लोहकीटमेंभी है. लोहका कीट बहेडेकी लकड़ीकी अग्निमें तपाई गोमूत्रमें सात बेर बुझावै ॥ ५३ ॥

निर्वाप्यचूर्णयेत्पश्चान्मर्दयेत्सुरभीजलैः ॥ ए
कंगजपुटंदत्वामंडूरंसर्वकार्यकृत् ॥ ५४ ॥

टीका—फिरि चूरण करिके गोमूत्रमें खरल करै सुखाई गजपूट देई तौ शुद्ध मंडूर होई ॥ ५४ ॥

लोहवत्सर्वमारुघ्यातंसेवनादिकमस्यवै ॥ ता
म्रवत्पित्तलंकांस्यंजानीयान्मारणादिषु ॥ ५५ ॥

टीका—इस मंडूरका गुण अवगुण शांति अनुपान लोहवत्. कांसा पीतलका मारना गुणादि अनुपान वगैरे ताम्रवत् जानना ॥ ५५ ॥

अथधातुसेविनोवर्ज्यानि ॥ राजिकामद्यमा
पात्रंतैलमम्लरसंतथा ॥ पत्रशाकंनसेवेत
लोहभक्षीकदाचन ॥ ५६ ॥

टीका—अथ धातु सेवनीवालेको वरजनीय पदार्थ. राई मदिरा, उडदंका व्यंजन, तेल, खटार, पत्तेउंकी भाजी ॥ ५६ ॥

कृष्णामंडंकदलीकंवकरमर्दचकांजिकं ॥ कार

वेल्लं करीरं च षट्ककारादिकं त्यजेत् ॥ ५७ ॥
इति श्रीपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायामनु-
पानतरंगिण्यां प्रथमा वीचिः ॥ १ ॥

टीका—रूमाड जिसकों कोला औ कुल्लाडा ओ
मुराभी कहते है औ केलेका कंद, करौदा, कांजी,
करेला, करील इनकों न खाई ॥ ५७ ॥

इति श्रीमद्रमणविहारीकृतायां अनुपानतरंगिणीटी-
कायां नौकाख्यायां प्रथमकोष्ठकः ॥ १ ॥

अथोपधातुविधिः ॥ तत्रोपधातुसंख्या ॥ मा-
क्षिकंतुत्थकंतालं नीलांजनमथाभ्रकं ॥ मनः-
शिलाचरसकंप्राहुः सप्तोपधातवः ॥ १ ॥

टीका—अथोपधातुविधिः. तत्र उपधातुसंख्या. सो-
नामाखी १, नीलातूथा जिसकों मोरतूथा औ तुटि-
याभी कहते हैं २, हरिताल ३, सुरमा ४, अभ्रक, ५,
मनःशिला ६, खपरिया ७, ये सात उपधात हैं ॥ १ ॥

तत्रादौ हेममाक्षिकशोधनं ॥ भागत्रयं
कांचनमाक्षिकस्य सिंधूत्थभागैकमयः क-
थ्यते ॥ जंभीरनीरैः फलपूरजैर्वा नीरैर्विपा-
च्यं ललनेऽग्निनावै ॥ २ ॥

टीका—तहां प्रथम सोनामाखीविधि. तत्र शोधन. तीन भाग सोनामाखी, एक भाग सैधव नोन, लोहकी कडाहीमें डारिके जंभोरी वा विजोराके रसके साथ पचावै ॥ २ ॥

यावत्कटाहं भजते रुणत्वं तावद्विघट्टेदयिलोह
हव्या ॥ पश्चात्स्वयं शीतलतामुपेतमुत्तार्य शु-
द्धं सुरसेषु योज्यम् ॥ ३ ॥

टीका—जबतक कडाह लाहलन होई तबतक लोहकी कछीसें घोटता जाई. फिर उतारी ठंडा भएपर रसक्रियामें युक्त करै ॥ ३ ॥

अथ मारम् ॥ कुलथस्य कपायेण वाजमूत्रे
णमर्दयेत् ॥ वार्तेलेनारविंदाक्षितकैर्वास्वर्ण-
माक्षिकम् ॥ ४ ॥

टीका—अथ सोनामाखीमारण. सोनामाखीको कुलथीके काटेमें वा बकरेकें मूत्रमें वा तेलमें या छाछिमें खरल करै ॥ ४ ॥

पश्चात्संपुटके रुध्वापुटे द्रजपुटे हितत् ॥ रक्त-
वर्णं मृतं सम्यक् सर्वकार्येषु योजयेत् ॥ ५ ॥

टीका—फिर शरावसंपुटमें रक्तके गजपुट देई, तौ लाल भस्म होई सो सर्वकार्यमें युक्त करना ॥ ५ ॥

अथान्यःप्रकारः ॥ भागैकंगंधकंशुद्धंचतुर्भा
गंसुमाक्षिकं ॥ संमर्द्यैरंडतैलेनततोनागपुटे
पुटेत् ॥ ६ ॥

टीका—अथ दूसरी विधि, एक भाग गंधक,
चारिभाग शुद्ध सोनामाखी एरंडके तेलमे मर्दन क-
रिके गजपूट देई ॥ ६ ॥

सिंदूराभंमाक्षिकस्यभसितंभवतिध्रुवम् ॥ अ
नेकैर्वेद्यशास्त्रज्ञैःकथितंप्रियवल्लभे ॥ ७ ॥

टीका—नौ सिंदूरवर्ण माक्षिकभस्म होता है, ऐसा
अनेक वेद्यशास्त्रज्ञ कहते हैं ॥ ७ ॥

अथगुणाः ॥ तृप्यंस्वर्यंहिचक्षुष्यंल्यवाय्य
पिरसायनं ॥ हंतिवस्त्यर्तिशोफाशोमेहकु
ष्ठोदरक्षयान् ॥ ८ ॥

टीका—अथ स्वर्णमाक्षिकगुण, वाजीकरण है.
स्वर शुद्ध होता है. नेत्ररोग हरता है. स्त्रीसगकी रुचि
वढाता है. रसायन है. वस्तिपीडा, शोफ, अर्श प्र-
मेह, कुष्ठ उदररोग, क्षय ॥ ८ ॥

पांडुरोगंविपंपित्तंकामलांचहलीमकं ॥ वातं
वातात्मजःपुत्रंरावणस्ययथाऽहनत् ॥ ९ ॥

इतिशोधनमारणे ॥ अथगुणदोषौ ॥ तुत्थं
भस्मकफंहंतिपामांकुष्ठंविपंकृमीन् ॥ चक्षु
प्यंलेखनंभेदिशुद्धिहीनंहिदोषकृत् ॥ १६ ॥

टीका—अथ गुण औ दोष. तुत्थभस्म कफनाश-
क है. कडू, कुष्ठ, विष, कृमी हरता है. नेत्ररोग हरता
है. फूली वगैरे काटता है. मलको फोडता है. औ अ-
शुद्ध रोगकारक है ॥ १६ ॥

अथशांतिः ॥ जंवीरस्वरसंवापिलाजावारि
समन्विताः ॥ लामजकजलंवापिपिवेतुत्थ
कशांतये ॥ १७ ॥

टीका—अथ तुत्थविकारशांतिः. जमीरीका रस वा
चावलकी खीलै जिनकों कुरमुरा औ धानी औ ला-
ईभी कहते है तिन्हे जलसंग सेवन करै वा खस
जिसको वालाभी कहते है तिसका अर्क पियै तौ
तुत्थविकार शांति होइ ॥ १७ ॥

अथानुपानं ॥ नवनीतयुतंकंडूविषकुष्ठ
निवारणं ॥ कृमिरोगांविडंगेनतांबूलेनक
फंजयेत् ॥ १८ ॥

टीका—अथ अनुपान. माखनसग खाज, विष .

कुष्ठ निवारण करता है. वायविडम्गमें कृमिनाशक है. पानमें कफ हरता है ॥ १८ ॥

माक्षिकेणांजितंहन्तिचक्षूरोगंसुदारुणं ॥ ए
रंडतैलसंयुक्तंभेदयेदिदमेवहि ॥ १९ ॥

टीका—मधुसंग अंजन करनेसे नेत्ररोग हरता है.
एरंड तेलसंग रेचन है ॥ १९ ॥

अथहरितालविधिः ॥ तत्रशोधनं ॥ तालकं
त्रिफलाकाथेस्वेदयेत्कांजिकेतथा ॥ कूष्मांड
स्वरसेतैलेयामंयामंष्टथक्तुवा ॥ दोलायंत्रेसु
धानीरेशुद्धंस्यात्सर्वकार्यकृत् ॥ २० ॥

टीका—अथ हरितालविधिः, तत्रशोधन, हरतालको
त्रिफलाके काठेमें औ कांजीमें औ भूरा कुल्लडाके र-
समें, तेलमें न्यारा न्यारा पहरकी आंच दोलायंत्रसें
देना, अथवा चूनाके जलमें पहर चारि दोलायंत्रमें स्वे-
दन करना ती शुद्ध सर्व कार्ययोग्य होता है ॥ २० ॥

अथमारणं ॥ अश्वत्थस्वरसेस्तालमर्दयेद्वि
नविंशकम् ॥ गोलकंतुततःकृत्वाशोषये
दात्तपेष्टम् ॥ २१ ॥ पश्चाद्गण्डेश्वत्थभूतिं
पूरयेद्वैकेष्टदां ॥ शनैर्गोलंनिधायथततोभू

तिंप्रपूरयेत् ॥ २२ ॥ संयंत्र्यमुद्रयेत्पश्चाच्च
ह्यांसंस्थाप्यदीपयेत् ॥ चतुर्यामावधिवन्हि
स्वांगशीतंसमुद्धरेत् ॥ २३ ॥

टीका—अथ मारण. पीपरके रसमें बीस दिन
हरिताल खरल करिके गोला बनाईके धूपमे खूब
सुखाइलेइ ॥ २१ ॥ फिरि एक हंडीमें पिपरकी भस्म
आधी भैरे खूब दवाइके तिसपर गोला धरिके ऊपर
वही भस्म फिरि दवाइके भैरे ओ हंडीको मुद्रा
देके चूल्हेपर चढाई चारि पहर आंच देइ सीतल
भये भस्म युक्तीसें निकालै ॥ २२ ॥ २३ ॥

अन्यःप्रकारः ॥ तालंपुनर्नवानीरैःपुटेदेक
दिनंप्रिये ॥ कृत्वातद्गोलकंपश्चाच्छोषयेदात
पेसुधीः ॥ २४ ॥

टीका—दूसरी विधि. हरितालको पुनर्नवाके रसमें ए-
क दिन खरल करिके गोला बनाई सुखावै ॥ २१॥
तद्रूत्यार्धभृतेभांडेगोलकंन्यस्यपूरयेत् ॥ व
र्षाभूभस्मनामुद्रांविदध्याच्चापिशोषयेत् २५

टीका—फिरि पुनर्नवाकी भस्म आधी हंडीमें
भरिके ऊपरसें गोला रखिके फिरि भस्म दवाइके
भरि मुद्रा देके ॥ २५ ॥

चूल्यांखवेदयामांतमग्निदानात्सुनिश्चितं ॥
भवेद्भूतिस्तुगुंजैकामक्षितारुग्विनाशिनी २६

टीका—चूल्हे चढाई चालीस ४० पहरकी आंचसें
भस्म होता है. स्त्री एक सर्व रोगहारक है ॥२६॥

अथान्यः ॥ द्रोणपुष्पीरसैर्भाज्यंतालकंन्यस्य
यंत्रके ॥ उर्ध्वपातनकेदत्त्वावन्हियामचतुष्ट
यं ॥ २७ ॥ स्वांगशीतंतमुद्धात्यचोर्ध्वलग्नं
हितालकं ॥ गृहीत्वाभावयेत्पश्चात्पूर्ववत्पा
चयेत्ततः ॥ २८ ॥ त्रिःसप्तपुटकैरेवंताल
भूतिर्भवेद्भुवं ॥ एवंहिकन्यकाद्रावैःशतकृ
त्वोविपाचयेत् ॥ २९ ॥

टीका—अथ तीसरी विधि. गूमाके रसमें हरिताल
घोटिके डमरू यंत्रमें आंच देइ ठंडे भये पीछे ऊपरकी
हांडीमें लगा छोडाइके फिरि घोटिके आंच देइ. ऐसें
एकइस २१ आंचमें भस्म होता है. ऐसे ही कुमारिपा-
ठके रसमें सौ १०० आंचसें भस्म होता है
॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥

अथगुणाः ॥ हंतिवातामयान्सर्वान्कफपि
तगुदामयान् ॥ हरितालंमृतंकुष्ठंप्रमेहंवैज्व
रादिकान् ॥ १३० ॥

टीका—अथ हरितालगुण, संपूरण वातरोग, ओ
कफरोग औ पित्तरोग, गुदाके रोग, कुष्ठ, प्रमेह औ
ज्वरादिक सब रोग हरता है ॥ १३० ॥

अथाशुद्धदोषाः ॥ अशुद्धं पीतवर्णं यन्मृतं ता
लं सधूमकम् ॥ वातपित्तामयान्कुष्ठं देहना
शंकरोति च ॥ ३१ ॥

टीका—अथ अशुद्ध दोष, जो हरिताल अशुद्ध
औ पीला औ अग्निपर डालनेसें धूवां देवै तो वात
पित्तकुष्ठादिक रोगकारक औ देहनाशक भी है ॥ ३१ ॥

अथ शांतिः ॥ कृष्णमांडस्वरसंवापियवासांच
निपेचयेत् ॥ नाकुलीस्वरसंवापिसितायुक्तं
वरांगने ॥ ३२ ॥

टीका—अथ शांतिः, सफेद कुल्लडेका रस वा यवासा
वा कडुविनाइका रस शकरयुक्त सेवै ॥ ३२ ॥

ससितं जीरकं त्रालेयः स्वादे द्विद्विनसप्तकं ॥ हरि
तालविकारेण मुक्तः स्यात्सुखसंयुतः ॥ ३३ ॥

टीका—जीरा शकर सात दिन सेवन करै तो ता-
लविकार मिटे ॥ ३३ ॥

अथानुपानानि ॥ तालं छिन्नारजोयुक्तं तत्का

श्वेनयुतंतुवा ॥ वातास्रंकुष्ठकंहंतिचक्रपाणि
र्यथाऽसुरान् ॥ ३४ ॥

टीका—अथ अनुपान. हरितालको गिलोइके चूर्णमें वा काढेमें लेई तौ वातरक्त जाई ॥ ३४ ॥

रक्तदोषनिशायुक्तं तांबूलेन क्षयं जयेत् ॥ तद्व
जलोदरातं कंहंति सिंधुफलान्वितं ॥ ३५ ॥

टीका—हलदीमें रक्तदोष, तांबूलमें क्षयरोग, समुद्रफलमें जलोदरको नाश करता है ॥ ३५ ॥

कूष्मांडस्वरसैः कंडुमुपदंशं भगंदरं ॥ विसर्पं
मंडलं वातरक्तं विस्फोटकं जयेत् ॥ ३६ ॥

टीका—भूरे कुल्लडाके रससैं खुजली औ उपदंश, भगंदर, विसर्प, मंडल, कुष्ठ, वातरक्त, विस्फोटक हरता है ॥ ३६ ॥

पांडुक्षयज्वरान्हंति हरितालं सितायुतं ॥
भुक्तैव पथ्यमश्रीतगोदुग्धांधः सितायुतं ॥
॥ ३७ ॥ अंधः ओदनं ॥

टीका—शकरसंग खानेसैं पांडु, क्षय, ज्वर नाश करे है. परंतु पथ्य गाईका दूध औ शकरसंग भात खाइ है ॥ ३७ ॥

अल्पाहारं प्रकुर्वीत नीरमल्पं प्रिये पिवेत् ॥ स दु-
ग्धालप्सिकां पीत्वा भक्षयेच्च सितोपला ॥ ३८ ॥

टीका—औ अल्प आहार करै. जल थोस पियै.
औ दूधसंग लापसी पिवै. मिश्री खाई ॥ ३८ ॥

सायंतनाशने खादेत् कृसरं लवणं विना ॥ वर्ज-
येत् प्रमदासंगं स्वपेदन्वन्तरि स्मरन् ॥ ३९ ॥

टीका—संध्याको अलोनी खिचड़ी खाई. स्त्री-
संभोग त्यागै. सोवनेके वख्त घन्वन्तरिका स्मरण
करिके सोवै ॥ ३९ ॥

शृंगवेरां बुनावातं शूलं सूतिगदं जयेत् ॥ कृस-
रांतघृतां खादेत् पथ्ये दुग्धौदनं तुवा ॥ ४० ॥

टीका—वातरोग शूल सूतिकारोगमें अदरकके
रसमें लेई अदरकको आदाभी कहता है. पथ्यमें घी
खिचड़ी वा दूधभातभी खाता है ॥ ४० ॥

भेषजादनमारभ्य मुहूर्तद्वितयावधि ॥ पानी
यं न पिवेद्वालेपि पासुरपि रोगवान् ॥ ४१ ॥

टीका—जिस वख्त औषध खाय तबसे दोमुहूर्त
पियास होई तौभी पानी न पियै ॥ ४१ ॥

शृतशीता बुनाता लमशक्तः पुरुषः पिवेत् ॥ स

निपातं वातगुल्मं वायुमर्धांगकं जयेत् ॥ ४२ ॥

टीका—अशक्त पुरुष शक्ति प्राप्तिके वास्ते दूध गरम करि ठढा करिके उसमें लेई औ इसी अनुपानसें सन्निपात, वातगुल्म, वातरोग, अर्धांग इनमें देई ॥ ४२ ॥

निर्वलो वलसंप्राप्त्यै जाती फलसमन्वितं ॥ रक्तपित्ते निशासार्धवीर्यस्तं भायपर्णयुक् ॥ ४३ ॥

टीका—वलप्राप्तिके वास्ते जायफलमें देई, रक्तपित्तमें हलदीसग, वीर्यस्तभनको पानमें ॥ ४३ ॥

ऊर्ध्वश्वासं शिवायुक्तं शुब्धालस्यं जयेत्सुधीः ॥ त्रिसुगंधान्वितं तालमास्यदौर्गन्ध्यनाशनम् ॥ ४४ ॥

टीका—ऊर्ध्वश्वासमें हरडयुक्त, आलस्यमें सौंठीसंग, सुखदुर्गंध जानेकों तजपत्र इलायचीमें ॥ ४४ ॥

जलोदरमजामूत्रैः प्रमेहं स्वरसारसैः ॥ जातिपत्रिकुंकुमाभ्यां प्रतिश्यायं निवारयेत् ॥ ४५ ॥

टीका—जलोदरमें बकरीके मूत्रसंग, प्रमेहमें तुलसीके रससंग, जायपत्रीके रससंग प्रतिश्यायमें, जिसको जुकाम औ सरदीभी कहते हैं ॥ ४५ ॥

अग्निमाद्यं जयेत्कांते पिप्पलीमधुसंयुतं ॥ का

संक्षयंसितायुक्तनाशयेद्विषमज्वरान् ॥ ४६ ॥

टीका—मंदाग्निमें मधु पिप्परीसंग, कास, क्षय, विषमज्वरमें शकरसंग ॥ ४६ ॥

लवंगतजकर्पूरैर्वीर्यस्तंभायतालकम् ॥ गो
क्षीरेणयुतंसेवेद्वीर्यवृद्धौघटस्तनि ॥ ४७ ॥

टीका—फिरि वीर्यस्तंभकेवास्ते लवंग, तज, कर्पूरसंग, वीर्यवृद्धिकेवास्ते गौके दुग्धसंग ॥ ४७ ॥

अथनीलांजनविधिः ॥ जंवीरस्यांबुनाभाव्यं
नीलांजनमथातपे ॥ शोषयेच्चदिनैकेनशुद्धि
मायातिनिश्चितम् ॥ ४८ ॥

टीका—अथ नीलांजनविधि. सुरमाको जंभीरीके रसकी पुट दैके एकदिन धूपमें सुखाइ लेइ तौ शुद्ध होता है ॥ ४८ ॥

अथान्यः ॥ सौवीरंकांजिकेस्विन्नंयामैकेनवि
शुद्ध्यति ॥ अथगुणाः ॥ सौवीरंशीतलंग्राहि
चक्षुष्यंमधुरंस्मृतम् ॥ सिध्मानंक्षयपित्तास्र
कफंहंतिविशेषतः ॥ ४९ ॥

टीका—अथ दूसरी विधि. सुरमा एक पहर कांजीमें दोलायंत्रमें पचावे तौ शुद्ध होई. अथ गुण. सुरमा सीत

ल हे. ग्राही है. नेत्र निरोग करता है. मीठा है. सहुवो,
क्षय, पित्त, रक्त, कफ इनको मारता है ॥ ४९ ॥

नीलांजनमतीसारंग्रहणीमपिनाशयेत् ॥ का
श्मीरनागफेनाभ्यामरविंदविलोचने ॥ ५० ॥

टीका—औ केशर अफीमसंग संग्रहणी अतीसा-
रकोंभी दूरी करता है ॥ ५० ॥

समंवैपारदं नागंद्वयोस्तुल्यमयेऽजनम् ॥ शु
द्धकर्पूरकंवालेपारदापंचमांशकम् ॥ ५१ ॥ वि
मर्द्यखल्वकेसम्यगंजयेन्नेत्रयुग्मके ॥ नेत्रदो
षविमुक्तः सन् सुखंसौंदर्यमाप्नुयात् ॥ ५२ ॥

टीका—पारा सीसा समभाग, दोनोंके सम सुर-
मा, पारासें पंचमांश शुद्ध कपूर, सबको खरल करिके
अंजन करै तौ नेत्ररोग जाई ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

सौवीरं सैधवं कुण्ठं वीजान्येडगजस्य च ॥ विडं
गंसर्पपान्पिष्ट्वा कांजिकेन प्रलेपयेत् ॥ सिध्मा
नं मंडलं कुण्ठं दद्रुमेव जयेत्क्षणात् ॥ ५३ ॥

टीका—सुरमा, सैधव लवण कुट जिसकों उपले-
टभी कहते हैं. पमाडका बीज, वायविडग, सरसौ,
आंजीमें पीसिके छणतै सौ. सेहुवा, मंडरू, कुष्ट,
दाद इनको नाश करै ॥ ५३ ॥

संक्षयंसितायुक्तनाशयेद्विषमज्वरान् ॥ ४६ ॥

टीका—मंदाग्रिमें मधु पिप्परीसंग, कास, क्षय, विषमज्वरमें शकरसंग ॥ ४६ ॥

लवंगतजकर्पूरैर्वीर्यस्तंभायतालकम् ॥ गो
क्षीरेणयुतंसेवेद्वीर्यवृद्धौघटस्तनि ॥ ४७ ॥

टीका—फिरि वीर्यस्तंभकेवास्ते लवंग, तज, कर्पूरसंग, वीर्यवृद्धिकेवास्ते गौके दुग्धसंग ॥ ४७ ॥

अथनीलांजनविधिः ॥ जंबीरस्यांबुनाभाव्यं
नीलांजनमथातपे ॥ शोषयेच्चदिनैकेनशुद्धि
मायातिनिश्चितम् ॥ ४८ ॥

टीका—अथ नीलांजनविधि. सुरमाको जंबीरीके रसकी पुट दैके एकदिन धूपमें सुखाइ लेइ तौ शुद्ध होता है ॥ ४८ ॥

अथान्यः ॥ सौवीरंकांजिकेस्त्रिन्नयामैकेनवि
शुद्ध्यति ॥ अथगुणाः ॥ सौवीरंशीतलंग्राहि
चक्षुष्यमधुरंस्मृतम् ॥ सिध्मानक्षयपित्तास्र
कफहंतिविशेषतः ॥ ४९ ॥

टीका—अथ दूसरी विधि. सुरमा एक पहर कांजीमें दोलायंत्रमें पचावै तौ शुद्ध होई. अथ गुण. सुरमा सीत

लहे. ग्राही है. नेत्र निरोग करता है. मीठा है. सहुबो,
क्षय, पित्त, रक्त, कफ इनको मारता है ॥ ४९ ॥

नीलांजनमतीसारंग्रहणीमपिनाशयेत् ॥ का
श्मीरनागफेनाभ्यामरविंदविलोचने ॥ ५० ॥

टीका—औ केशर अफीमसंग संग्रहणी अतीसा-
रकोभी दूरी करता है ॥ ५० ॥

समंवैपारदं नागंद्वयोस्तुल्यमयेंऽजनम् ॥ शु
द्धकर्पूरकंवालेपारदापंचमांशकम् ॥ ५१ ॥ वि
मर्द्यखल्वकेसम्यगंजयेन्नेत्रयुग्मके ॥ नेत्रदो
षत्रिमुक्तः सन् सुखं सौंदर्यमाप्नुयात् ॥ ५२ ॥

टीका—पारा सीसा समभाग, दोनोंके सम सुर-
मा, पारासें पंचमांश शुद्ध कपूर. सबको खरल करिके
अंजन करै तौ नेत्ररोग जाई ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

सौवीरसैंधवकुण्डवीजान्येडगजस्यच ॥ विडं
गंसर्पपान्पिष्टाकांजिकेन प्रलेपयेत् ॥ सिध्मा
नमंडलंकुण्डदद्रुमेवजयेत्क्षणात् ॥ ५३ ॥

टीका—सुरमा, सैंधव लवण कुट जिसको उपले-
टभी कहते हैं. पमाडका बीज, वायविडंग, सरसौ,
कांजीमें पीसिके लगावै तौ सेहुवा, मडल, कुष्ठ,
दाद इनको नाश करै ॥ ५३ ॥

शर्कराज्ययुतंपित्तंकफंशुंल्यभयागुडैः ॥५४॥

टीका—पित्तरोगमें घी शक्करसग, कफरोगमें हरड गुड सोठीसग ॥ ५४ ॥

नीलांजनंकनकजंवरखंविशुद्धं ह्यंगवेनससि
तामधुनैकगुंजं ॥ खादेन्नरः क्षयनिपीडितआ
शुकांतेकांतिलभेतविपुलंबलमंबुजाक्षि ५५

टीका—शुद्ध सुरमा एक रती सोनेका वरख दो-
नोंको एकत्र करि माखनमिश्रि सहतसंग खाई तो
क्षयीरोग जाई ॥ ५५ ॥

अथाभ्रकविधिः ॥ तत्तुचतुर्विधं ॥ श्वेतंकृ
ष्णंतथापीतंधूम्रवर्णं क्रमात्प्रिये ॥ ब्राह्मणं क्ष
त्रियं वैश्यं शूद्रं प्राहुर्भिषग्वराः ॥ ५६ ॥

टीका—अथ अभ्रकविधि. सो अभ्रक चारि प्रका-
रका है. श्वेत, कृष्ण, पीत, धूम्र. श्वेत ब्राह्मण, कृष्ण
क्षत्रिय, पीत वैश्य, धूम्रवर्ण शूद्र ॥ ५६ ॥

कृष्णे हेमगुणान्प्राहुः श्वेते रौप्यगुणानपि ॥
पीते ताम्रारवंगादिगुणान् धूम्रं निरर्थकम् ५७

टीका—कृष्णमें सोनेके गुण है. श्वेतमें रूपेके
गुण है. पीतमें ताम्र, पित्तल वगादिके गुण है.
धूम्र निरर्थक है ॥ ५७ ॥

अन्यच्च ॥ नागंभेकंपिनाकारव्यं वज्र
मभ्रंचतुर्विधं ॥ नागमग्नौसुसंतप्तं फू
त्कारंकुरुतेभृशम् ॥ ५८ ॥ भेकाव्हं
दार्दुरंशब्दंपिनाकंदलविस्तृतिम् ॥
वज्रमेववरंतेषां विकारंनयतोव्रजेत् ॥ ५९ ॥

टीका—औरभी भेद है. नाग १, भेद २, पिनाक
३, वज्र ४, ए चारि भेद है. नागजातीका अभ्रक अ-
ग्निमें तपाया फूँकार करते है. भेक मेडकका शब्द क-
रता है. पिनाकके वरख फैलते है. वज्र ज्योंका त्यों
रहता है सो श्रेष्ठ है ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

गृणीयाच्चततोवज्रंजराव्याधिविनाशनम् ॥
कफवातकरं चाभ्रमशुद्धं मृत्युदंस्मृतं ॥ ६० ॥

टीका—इसवास्ते वज्रही ग्रहण करना. जो जरा-
व्याधिका टालनेवाला है. जो अशुद्ध है सो कफवातका
करनेवाला है औ मृत्युकारक है ॥ ६० ॥

तस्माद्विशोधनं वक्ष्ये विशेषामयनाशनं ॥ ग
गनं वन्हिसंतप्तं गवांक्षीरे विनिक्षिपेत् ॥ ६१ ॥

टीका—तिसवास्ते शोधन कहते हैं. जो विशेष-
करिके रोग नाशक है. अभ्रक अग्निमें तपाइके गा-
इके दूधमें बुझाई लेना ॥ ६१ ॥

शर्कराज्ययुतंपित्तकफशुंध्यभयागुडैः ॥५४॥

टीका—पित्तरोगमें घी शर्करासंग, कफरोगमें हरड गुड सोंठीसंग ॥ ५४ ॥

नीलांजनंकनकजंवरखंविशुद्धं ह्यंगवेनससि
तामधुनैकगुंजं ॥ स्वादेन्नरः क्षयनिपीडितआ
शुकांतिकांतिलभेतविपुलंवलमंबुजाक्षि ५५

टीका—गुद्ध सुरमा एक रती सोनेका वरख दो-
नौको एकत्र करि माखनमिश्रि सहतसंग खाई तौ
क्षयीरोग जाई ॥ ५५ ॥

अथाभ्रकविधिः ॥ तत्तुचतुर्विधं ॥ श्वेतंकृ
ष्णंतथापीतंधूम्रवर्णैकमात्प्रिये ॥ ब्राह्मणक्ष
त्रियवैश्यंशूद्रंप्राहुर्भिषग्वराः ॥ ५६ ॥

टीका—अथ अभ्रकविधि. सो अभ्रक चारि प्रका-
रका है. श्वेत, कृष्ण, पीत, धूम्र. श्वेत ब्राह्मण, कृष्ण
क्षत्रिय, पीत वैश्य, धूम्रवर्ण शूद्र ॥ ५६ ॥

कृष्णेहेमगुणान्प्राहुः श्वेतेरौप्यगुणानपि ॥
पीतेताम्रारवंगादिगुणान्धूम्रंनिरर्थकम् ५७

टीका—कृष्णमें सोनेके गुण है. श्वेतमें रूपेके
गुण है. पीतमें ताम्र, पित्तल वंगादिके गुण है.

धूम्र निरर्थक है ॥ ५७ ॥

अन्यच्च ॥ नागंभेकंपिनाकारव्यंवज्र
मभ्रंचतुर्विधं ॥ नागमग्नौसुसंतप्तंफू
त्कारंकुरुतेभृशम् ॥ ५८ ॥ भेकाव्हं
दार्दुरंशब्दंपिनाकंदलविस्तृतिम् ॥
वज्रमेववरंतेषांविकारंनयतोव्रजेत् ॥ ५९ ॥

टीका—औरभी भेद है. नाग १, भेद २, पिनाक
३, वज्र ४, ए चारि भेद है. नागजातीका अभ्रक अ-
ग्निमें तपाया फूकार करते है. भेक मेडकका शब्द क-
रता है. पिनाकके वरख फैलते है. वज्र ज्योंका त्यों
रहता है सो श्रेष्ठ है ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

गृण्हीयाच्चततोवज्रंजराव्याधिविनाशनम् ॥
कफवातकरंचाभ्रमशुद्धंमृत्युदंस्मृतं ॥ ६० ॥

टीका—इसवास्ते वज्रही ग्रहण करना. जो जरा-
व्याधिका टालनेवाला है. जो अशुद्ध है सो कफवातका
करनेवाला है औ मृत्युकारक है ॥ ६० ॥

तस्माद्विशोधनंवक्ष्येविशेषामयनाशनं ॥ ग
गनंवन्हिसंतप्तंगवाक्षीरेविनिक्षिपेत् ॥ ६१ ॥

टीका—तिसवास्ते शोधन कहते हैं. जो विशेष-
करिके रोग नाशक है. अभ्रक अग्निमें तपादके गा-
डके दूधमें बुझाई लेना ॥ ६१ ॥

भिन्नपत्रंततःकुर्यात्तंडुलीयाम्लयोर्द्रवैः ॥ भा
वयेदष्टयामांतमेवमभ्रविशुध्यति ॥ ६२ ॥

टीका—फिरि जुदे जुदे पत्रकरिके तांदुलिया जि-
सको चौलाईभी कहते हैं ओ खटाईके रसमें आठ
पहर भिजाये रखना तो शुद्ध होता हे ॥ ६२ ॥

पश्चात्कांजिकसंपिष्टकंवलेव्रीहिसंयुतं ॥ व
ध्वासंमर्दयेद्वाढंमृद्गाडिकांजिकान्विते ॥ ६३ ॥

टीका—फिरि कांजीमें पीसिके चतुर्थांश व्रीहिसं-
युक्त कंवलमें बांधिके एक वासनमें कांजी भरिके
उसमें खूब मर्दन करना ॥ ६३ ॥

मर्दनाद्यद्गलेत्पात्रेधान्याभ्रंतंविदुर्बुधाः ॥ अ
थवावदरकाथेनिःक्षिप्तंवह्नितापितम् ॥ मर्दि
तंसुदृढंशुष्कंधान्याभ्रादतिरिच्यते ॥ ६४ ॥

टीका—जो मर्दन करनेसे पात्रमें कवलके छिद्रनमें
होइके गिर सो धान्याभ्रसेंभी उत्तम होता हे ॥ ६४ ॥

अथमारणं ॥ अर्कक्षीरेणसंपिष्टमभ्रकंगोल
कीकृतम् ॥ संवेष्ट्यार्कदलैःपश्चात्संपुटेत्संनि
रोधितम् ॥ ६५ ॥ पुटेत्ताजपुटेनैवसप्तवारंप्र

यत्नतः ॥ कपर्दिनोजटाकाथैरेवंदत्वापुटत्रयं ॥
रक्तवर्णं भवेदभ्रं सर्वकार्येषु योजयेत् ॥ ६६ ॥

टीका—अथ मारण. अभ्रकको आंकड़ेके दूधमें खरल करिके गोला बनावै. फिरि आंकड़ेके पत्रऊपर लपेटिके संपुट करै ॥ ६५ ॥ फिरि गजपुट देई. ऐसे सात पुट देई. फिरि तीन पुट बड़की जटाके काढेकी देई तौ लाल अभ्रक होता है. सर्व कार्यमें लेना ॥ ६६ ॥

अथान्यः प्रकारः ॥ मुस्ताशुंठ्योः पृथग्भागं
पङ्कभागं शुद्धमभ्रकम् ॥ कांजिकाग्निरसैर्घस्रं
मर्दितं पुटितं पुनः ॥ ६७ ॥

टीका—दूसरा प्रकार. नागरमोथा औ सोंठिका एक एक भाग छ भाग शुद्ध अभ्रकके कांजी औ अरनीके रसमें मर्दन करिके पुट देना ॥ ६७ ॥

मर्दये त्रिफलाकाथेनैवंदत्वापुटत्रयं ॥ बला
नीरैश्च गोमूत्रैर्मुशलीशूरणद्रवैः ॥ ६८ ॥

टीका—औ तीन गजपुट त्रिफलाके काढेमें देना. औ वरिपारा जिसको चिकणाभी कहते हैं उसके बीजको बल्लरीज कहते हैं. तिसके रसमें औ गोमूत्रमें मुसलीके रसमें शूरणके रसमें ॥ ६८ ॥

स्वरसास्वरसैरस्येष्टथग्दत्वापुटत्रयम् ॥ ग
गनंसुमृतं रक्तं शुभ्रं रस्यमिदं भवेत् ॥ ६९ ॥

टीका—तुलसीके रसमें इनमें तीनि तीनि पुंठ जुदे
जुदे देई तौ मरा अन्नक रक्तवरण रमणीक होता है ६९
अथान्यः प्रकारः ॥ वज्रीक्षीरैरर्कदुग्धैर्धेनुमू
त्रैर्वलाजलैः ॥ ब्राह्मीरुदंतीस्वरसैर्वासाभि
शाल्मलीद्रवैः ॥ ७० ॥ कृष्णान्दस्वरसैरेवंदा
डिमीसलिलैस्तथा ॥ वराकाथेनगोजिह्वा
सलिलैरमृताद्रवैः ॥ ७१ ॥ जातीगोधुरमे
घानांकषायैर्वर्वरीद्रवैः ॥ शंखपुष्पीरसैर्द्राक्षा
रसैर्मूलकजैरसैः ॥ ७३ ॥ राक्षसीतुलसीमुं
डीविशालासलिलैरपि ॥ विदारीलतिकाभृं
गीमदाकाथैः पृथक्पृथक् ॥ ७३ ॥ सेतिका
तपनकाथैरुग्रगंधशृतैरपि ॥ सप्तकृत्योविशा
लाक्षिपाचयेदभ्रकंततः ॥ ७४ ॥

टीका—तीसरा प्रकार. सेहुड थूहरके दूधमें १,
आंकडेके दूधमें २, गोमूत्रमें ३, बरियाराके रसमें
४, ब्राह्मी ५, रुदंती ६, अरुसा ७, चित्रक ८,
सेमर ९, भुराकोहला १०, दाढीम ११, इनके र

समें त्रिफलाके काढेमें १२, गोभीके रसमें १३, गिलोयके रसमें १४, जार्द १५, गोखरू १६, नागर-
मोथ १७, इनके इनके काढेमें बबईके रसमें १८,
शंखाहुली १९, द्राक्ष २०, मूली २१, बबई जिसके
बीजको तुक्रमरिआं औ तुप्परेहांभी कहते हैं. २२,
तुलसी २३, गोरखमुंडी २४, इंद्रवारुणी जिसको
इंद्रायणभी औ इंद्रारुणभी कहते हैं २५, इनके र-
समें विदारी कंदकी बेली २६, जलभांगरा २७,
धवईके फूल जिसको धाई औ धावडीभी कहते हैं
२८, इनके काढेमें सौंफ जिसको बरियालीभी कहते
हैं २९, भिलामा ३०, लहसुन ३१, इनके काढेमें
इन एकतीसो ३१, औपधीनमें न्यारा न्यारा खरल
करि करि सात सात पुट देना. इतने दोसो दसपु
२१७ होइंगे ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥
वटारोहकपायेणकुकुट्रुस्वरसैस्तथा ॥ कपि
त्थस्याम्लिकायाश्चफलोद्भवरसेनच ॥ ७५ ॥
पृथग्विंशपुटैरेवंपाचयेद्भगनंततः ॥ निंबूक
स्वरसैःपंचदशकृत्वोविपाचयेत् ॥ ७६ ॥ त
त्संख्याकैःपुटैरेवंगुडदुग्धविमिश्रितम् ॥ ग
वांदधियुतंतद्वद्धृतखंडविमिश्रितम् ॥ ७७ ॥

पाचयेदश्रकं शुद्धं रम्यं रक्ततरं भवेत् ॥ चंद्रि
कारहितं शुद्धमशुद्धं स्यात्तदन्वितम् ॥ ७८ ॥

टीका—फिरि बडकी जटाके काढेमें बीस पुट १
औ कुकरौंधेके रसमें २ ओ कैयके फलके रसमें
जिसको कोठभी कहते हैं ३ औ आमलीके फलके
रसमें ४ इन चारोंको बीस २० बीस पुट देई, फिरि
निंबूके रसमें १ औ गुडयुक्त दूधमें २ औ गाड़के
दर्हीमे ३ औ घीशकरमें ४ इन चारोंमें पंदरह १५
पंदरह १५ पुट देई तौ रक्तवरण औ चमकरहित
शुद्ध होता है. जी चमक होई तो अशुद्ध हे फिरिभी
पुट देना चाहिए परतु यह तौ निश्चंद्रही होता है
॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

पुटान्येवं सहस्राणिभिर्गवुध्या प्रदापयेत् ॥
अथवा कन्यकाद्रावैः पुटे द्वारसहस्रकम् ॥ ७९ ॥

टीका—ऐसेही वैद्य अपनी बुद्धीसे हजार पुट देई.
अथवा कुमारी पाठके रसकी हजार पुट देई तौभी
शुद्ध भस्म होता है ॥ ७९ ॥

अथ गुणाः ॥ वातपित्तकफान्मेहकुष्ठश्वास
विषभ्रमान् ॥ गुल्मकासक्षतक्षीणग्रहणीपां
डुकामला ॥ भगंदरादिकान् हन्यादश्रंकामव
लप्रदम् ॥ ८० ॥

टीका—अथ गुण. वात, पित्त, कफ, प्रमेह, कुष्ठ, श्वास, विष, ध्रम, गुल्म, कास, क्षतक्षीण, संग्रहणी, पांडु, कामला औ भगंदर आदिक रोग दूर करिके काम औ बलकों देता है ॥ ८० ॥

अथापक्वदोषाः ॥ अपक्वमभ्रकंयत्स्यात्तथा चंद्रिकयान्वितम् ॥ करोतिविविधान् रोगान् प्राणानपिक्षयंनयेत् ॥ ८१ ॥

टीका—अथ अपक्वदोष. जो अपक्व आँ चमक-युक्त अभ्रक है सो नानाप्रकारके रोग करता है. औ प्राणनकाभी घातक होता है ॥ ८१ ॥

अथतच्छांतिः ॥ पिष्ट्वांगुनापिवेत्कांतेधात्री फलमतंद्रितः ॥ अपक्वाभ्रविकारेणमुक्तः स्याद्विसत्रयैः ॥ ८२ ॥

टीका—इसवास्ते इसकी शांति कहते हैं. अथ शांति. आमला जलसें पीसिके तीन दिन पियें तौ अभ्रकविकार जाई ॥ ८२ ॥

अथानुपानं ॥ गुंजैकंवाद्भिगुंजंवात्रि गुंजंगगनंनरः ॥ गुंजाचतुष्टयंवापि भक्षयेद्रोगशांतये ॥ ८३ ॥

टीका—अथ अनुपान, शुद्ध अश्वकभस्म एक रती वा दो वा तीन वा चारितक बलदेपिके रोगशांतिके वास्ते भक्षण करना ॥ ८३ ॥

मधुपिप्पलिसंयुक्तंकासंश्वासंविषंभ्र
मम् ॥ नाशयेत्कामलांगुल्मंपांडुसंग्र
हणीमपि ॥ ८४ ॥ कफक्षयंप्रमेहंच
ललनोत्तमभूषणे ॥ वातपित्तकफान्
कुष्ठंजीर्णज्वरमरोचकम् ॥ ८५ ॥

टीका—कास, श्वास, विष, भ्रम, कामला, गुल्म, पांडु, संग्रहणी, कफक्षय, प्रमेह, वात, पित्त, कफ, कुष्ठ, जीर्णज्वर, अरोचक इन रोगोंकी शांतिकेवास्ते मधु पिप्पलीमें ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

विडंगत्र्यूपणैर्युक्तंवह्णमभ्रंनिपेवितम् ॥
पांडुसंग्रहणीशूलक्षयश्वासारुचिप्रणु
त् ॥ ८६ ॥ तथामकुष्ठमंदाग्निकोष्ठ
रुक्कासमेहनुत् ॥ नवकंजविशालाक्षि
शुक्रवृद्धिविवर्धनम् ॥ ८७ ॥

टीका—पांडू, संग्रहणी, शूल, क्षय, श्वास, अरु-
ची, आम, कुष्ठ, मंदाग्नि, कोष्ठरोग, कास, प्रमेह,

इन रोगोंमें वायविडंग, सोंठि, मिरच, पीपरी, इनके चूरणमें देई. औ इसी अनुपानमें धातु औ बुद्धीकी वृद्धि करता है ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

शिलाजतुकणाचूर्णमाक्षिकैःसर्वमेहनुत् ॥ क्ष
यंस्वर्णान्वितंहंतिधातुवृद्धिकरोतिच ॥ ८८॥

टीका—शिलाजित, पीपरीचूर्ण सहतसंग प्रमेह-
कों हरता है. क्षयकों सोनेके बरखसंग नाश करता
है. औ धातु बढ़ाता है ॥ ८८ ॥

कायस्थागुडसंयुक्तंवातलोहितकंजयेत् ॥ र
क्तपित्तंनिहंत्यभ्रंद्राविडीसितयान्वितम् ८९

टीका—वातरक्तमें गुड हरडसंग. रक्तपित्तमें इ-
लायची शकरसंग ॥ ८९ ॥

त्रिकटुत्रिफलात्रिसुगंधसितागजकेशरमाक्षि
कसंयुतखम् ॥ द्यतिपांडुगदंक्षयमुत्पललो
चनिसत्पथगाग्रसरेललने ॥ ९० ॥

टीका—सोंठी, मिरच, पीपरी, हरड, आमला, ब-
हेडा, तज, पत्रज, इलायची, शकर, नामकेदारु
नका चूरण औ सहतमें अभ्रक लेई पांडु औ
राजयक्ष्मा जाई ॥ ९० ॥



भूधात्रीशर्कराव्यालदंष्ट्रैलाक्षीरसंयुतम् ॥ मू
त्रकृच्छ्रं प्रमेहं च हंत्यन्नवयौवने ॥ ९१ ॥

टीका—भूआमला, शर्कर, गुस्वरू, इलायची,
इनका चूरण औ गार्दके दूधमें अन्नक लेई तो मू-
त्रकृच्छ्र प्रमेह जाई ॥ ९१ ॥

सितोपलाऽमृतासत्वयुक्तं मेहगणं जयेत् ॥ म
ध्वाज्याग्र्यारजोयुक्तं वीर्यकृत्नेत्ररोगहत् ॥ ९२ ॥

टीका—प्रमेहमात्रमें गिलोइका सत्व, औ मि-
श्रिसंग. त्रिफलाका चूर्ण औ मधुघीसंयुक्त लेई तो
वीर्यशुद्धि होई औ नेत्ररोग जाई ॥ ९२ ॥

आरुष्करयुतं हन्यादर्शांसि विविधानिवै ॥ धा
तुस्तंभकरं भंगासंयुतं मधुरस्वरे ॥ ९३ ॥

टीका—भिलामायुक्त नानाप्रकारका अर्शरोग हरे.
भांगसंग वीर्यस्तंभन करे ॥ ९३ ॥

भाङ्गीपौष्करविश्वाश्वगंधामध्वन्वितं जयेत् ॥
वातं कट्फलपांचालीमधुयुक्तं कफामयम् ॥ ९४ ॥

टीका—भारंगी, पुष्करमूल, सांठी, असगंध, जि-
सको आसंधभी कहते हैं. इनका चूरण औ अन्नक
मधुसंग लेई तो वातके रोग जाई. कायफल, पीपरी,
मधुसंग लेई तो कफरोग जाई ॥ ९४ ॥

सर्वक्षारयुतंवह्निदीपयेदलिकुंतले ॥ मूत्रकृच्छ्रंतथामूत्राघातकंघातयेद्भुवम् ॥ ९५ ॥

टीका—सर्व क्षारोमें लेई तौ मंदाग्नि, मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात जाई ॥ ९५ ॥

लवंगमधुसंयुक्तंशुक्रवृद्धिप्रदंप्रिये ॥ गोदुग्धशर्करायुक्तंपित्तातंकप्रणाशनम् ॥ ९६ ॥

टीका—लवंग औ मधुसंग लेई तौ धातुवृद्धि होई. गोदुग्ध औ शर्करसंग पित्तरोग हरे ॥ ९६ ॥

अन्यानूरोगानूजयेद्युक्तयागगनेनभिषग्वरः ॥ निश्चयंमृगशावाक्षिप्रिये प्राणकुमारिके ॥ ९७ ॥

टीका—और रोगोंको वैद्य अपनी बुद्धिसैं अभ्रक अनुपानयुक्त करिके देई तौ जीतै. हे प्राणकुमारी, यह निश्चै है ॥ ९७ ॥

अथमनःशिलाशुद्धिः ॥ अजामूत्रेशिलापाच्यादोलकेदिवसत्रयम् ॥ तप्तपात्रेततःपाच्याक्षणैकंचविशुद्ध्यति ॥ ९८ ॥

टीका—अथ मनःशिलाविधि. तत्रशुद्धि. मन-शील बकरीके मूत्रमें दोलायंत्रमें तीन दिन पचावे.

फिरि गरम खपरा वा कुरछी वा तवापर छिनभरि
राखै तौ शुद्ध होई ॥ ९८ ॥

अथान्यः ॥ शृंगवेरस्यतोयेनाऽगस्तिपत्रां
बुनाऽथवा ॥ सप्तकृत्वः पृथग्भाव्यामनोव्हा
शुद्धिमृच्छति ॥ ९९ ॥

टीका—दूसरी औ तीसरी विधि, आदेके रसमें
अथवा अगस्तीके रसमें सात भावना देई तौ शु-
द्ध होई ॥ ९९ ॥

अन्योपिप्रकारः ॥ गवांतक्रेणयामैकमर्दना
च्छुभखल्वके ॥ नागमाताविशुद्धास्याच्छु
द्धचित्तेवरांगने ॥ १०० ॥

टीका—चौथी विधि, गार्दके मठामें एक पहर खल
कौर तौभी मनझाल शुद्ध होता है ॥ १०० ॥

अथगुणाः ॥ ज्वरं नेत्राभयं श्वासं कासं भूतभ
यं कफम् ॥ कृच्छ्रं विषं मनोगुप्ताहंति कुष्ठादि
कामयान् ॥ १ ॥

टीका—अथ गुण. ज्वर, नेत्ररोग, श्वास, कास,
भूतपीडा, कफ, कृच्छ्र, विष औ कुष्ठादि रोगोंको
हरता है ॥ १ ॥

अथानुपानं ॥ पिप्पलिर्निवफलाभ्यां शिलावि

मर्द्यासुकेरिवाल्लरसैः ॥ गुटिकाज्वरामयघ्नी
त्रिदोषभूतज्वरनिहंत्येव ॥ २ ॥

टीका—अथ अनुपान. पीपरी, नींबूके फल, मन-
शील करेलाके रसमें घोटिके चनाप्रमाण गोली त्रि-
दोषज्वरमें देना ॥ २ ॥

शिलायाद्विगुणं शंखमर्धमारीचकं रजः ॥ सै
धवं स्याच्चतुर्थं शचूर्णं नेत्रगदापहम् ॥ ३ ॥

टीका—मनःशिला एक भाग, शंख दोभाग, मि-
रच मनशीलसैं आधा, सैधवलोन मिरचसैं आधा भाग
इनका सूक्ष्म चूरन नेत्ररोगकों नाश करता है ॥ ३ ॥

शुक्रंतिमिरकंहंतिमाक्षिकेणचपिञ्चटम् ॥ अ
र्बुदं दधितोयेन कंजाक्षिप्रमदोत्तमे ॥ ४ ॥

टीका—फूली तिमिर सहतसंग हरता है. औ
चिपकापनभी जाता है. दर्होंके पानीसैं अर्बुदरोग
हरता है ॥ ४ ॥

कणामरिचसंयुक्ताशिलापिष्टांबुनांजिता ॥
भूतवेशहरानेत्रेसन्निपातज्वरापहा ॥ ५ ॥

टीका—पीपरी मिरचसंग जलमें पीसि गोलिकरिके
अंजन करनेसैं भूत औ सन्निपात जाता है ॥ ५ ॥

भाङ्गीविश्वान्वितं श्वासं विपंस्वर्णसमन्वितं ॥

वासकस्वरसव्योषैःकफंकासंजयेच्छिला ॥६॥

टीका—आसकों भारगी सोंठिसंयुक्त; सोनसग-
विपकों; सोंठी, मिरच, पीपरी, अरूपेके रसमें कफ
औ कासकों हरीती है ॥ ६ ॥

शिलैलार्जुनकासीसगृहधूमाव्दसर्जकैः ॥ स
रोध्ररोचनैर्लेपःसर्षपःस्नेहसंयुतः ॥ ७ ॥ कि
लासंकिटभंदद्रुंकुष्ठंपामांभगंदरम् ॥ इंद्रलु
प्तमथाशीसिहन्यादेवनृणामियम् ॥ ८ ॥

टीका—मनगील, डलायची, अर्जुनवृक्ष जितकों
कौहाभी कहता हैं तिसकी छाल, काशीग, घरका
धुवां, नागसमोथ, राल, लोध, गोरोचन सरसौका तेल
लेप करनेसें किलासरोग, किटभरोग, दाद,
कुष्ठ, खाज, भगदर, इंद्रलुप्त, अर्ग इतने रोग
जाते है ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथाशुद्धदोषास्तच्छांतिश्च ॥ अशुद्धाकुनटी
कुर्याद्वांतिभ्रांत्यादिकानूगदान् ॥ तच्छांत्ये
त्रिदिनंपीत्वामधुक्षीरंविशुद्ध्यति ॥ ९ ॥

टीका—अथ अशुद्ध दोष औ दोषकी शांति. अ-
शुद्ध भेनगील उलटी भ्रांत्यादि रोग, करता है. तिसरी
शांतिकेवास्ते तीनि दिन मधु दुध पीवे ॥ ९ ॥

अथखर्परशुद्धिः ॥ रसकंनरमूत्रेणपा
चयेद्दिनसप्तकम् ॥ दोलकेवाथगोमू
त्रेशुद्धिमायातिखर्परः ॥ ११० ॥

टीका—अथ खपरियाशुद्धि. खपरियाको दोलायंत्र-
कारिके मनुष्यके मूत्रमें सात दिन पचावै अथवा गो-
मूत्रमें पचावै तो शुद्ध होई ॥ ११० ॥

अथगुणाः ॥ रसकोहरतेरोगानूरक्त
दोषंगुदामयम् ॥ जीर्णज्वरमतीसा
रंप्रदरादिगदानपि ॥ ११ ॥

टीका—अथ गुण. खपरिया गुदाके रोग, जीर्णज्व-
र, अतिसार, प्रदर इत्यादि रोग हरता है ॥ ११ ॥

अथदोषास्तच्छांतिश्च ॥ अशुद्धाद्रसकाद्रो
गाजायंतेचेत्कथंचन ॥ गोमूत्रेणशमंयांति
प्रकाशेनयथातमः ॥ १२ ॥

टीका—अथ दोष औ शांति. जो अशुद्ध खपरि-
या सेवन करै तो अनेक रोग होई. तो गोमूत्र पी-
नेसें शांत होते है ॥ १२ ॥

अथानुपानं ॥ एकांशंमारिचंचूर्णैर्द्वावंशौरस
कस्यच ॥ तद्वयोरष्टमांशेननवनीतेनमर्दयेद्

त ॥ १३ ॥ पश्चान्निबुकनीरेणघृतंयावन्निग
च्छति ॥ मर्दयेच्चततःकृत्वावटीवल्लमितामि
यम् ॥ १४ ॥ कणामाक्षिकसंलीढानाशये
द्विपमज्वरान् ॥ ज्वरंधातुस्थितंधोरमशांसि
प्रदरंतथा ॥ १५ ॥ जीर्णज्वरंनेत्ररोगंपित्ता
तिरक्तवैकृतिम् ॥ रक्तातीसारकंहन्यात्पथ्ये
क्षीरोदनंहितम् ॥ १६ ॥

टीका—अथ अनुपान. एक भाग मिरचका चूरण,
दोनभाग खपरियाके, दोनोँके आठवे अंश गार्द
मारवनमें, मर्दन करे. पीछे नींबूके रसमें मर्दन कं
जबतक घी न सुखा होई जब चिकनई जाती रं
तब रती तीनिकी गोली बनावे. गोली एक मधु पी
परीसंग खाई तौ विपमज्वर, धातुगतज्वर, अर्श
प्रदर, जीर्णज्वर, नेत्ररोग, पित्तरोग, रक्तविकार, र
क्तातिसार इतने रोग जाई. पथ्यमें दूधभात अथवा
दूधरोटी देना ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

इतिश्रीपंडितरघुनाथप्रसादविरचिताया
मनुपानतरंगिण्यामुपधात्वनुपानकथनेद्वि
तीयावीचिः ॥ २ ॥

टीका—इति श्रीरमणविहारिकृतायामनुपानतरंगि-
णीटीकायां नौकाख्यायां द्वितीयः कोष्टकः ॥ २ ॥

अथरसशोधनमारणानुपानानि

तत्र पारदविधिः तत्रादावुत्पत्तिः ॥

यदादेवाविधिं गत्वा तारकासुरपीडिताः ॥ त
दोवाचामरान्ब्रह्माशृणुतादितिनन्दनाः ॥ १ ॥

टीका—अथ रसोंका शोधन, मारण, अनुपान,
कहते हैं. तहां प्रथम पारेका कहते हैं, तहांभी प्रथम
पारेकी उत्पत्ति कहते हैं. जब देव तारकासुरदैत्यक-
रिके पीडित होते भए, तब ब्रह्माके पास जायके
विज्ञापन करते भए की, हे महाराज, हमकों तारका-
सुर अति दुःख देता है. तब देवतोंसे ब्रह्मा बोले की,
हे अदितिके पुत्र तुम सुनो ॥ १ ॥

शिवशुक्रौद्भवेनायं मरिष्यति रिपुर्हिवां ॥ त
दादेवाः समाजग्मुः शंकरं लोकशंकरम् ॥ २ ॥

टीका—महादेवके वीर्यसे उत्पन्न भए पुत्रसे तु-
हारा शत्रु तारकासुर मरेगा. ऐसा सुनीके देवता
महादेवजीके पास गए ॥ २ ॥

विवाहं कारयामासुः पार्वत्या सह धूर्जटेः ॥ प
श्चात्तयोर्गतः कालः सुरतं कुर्वतोर्महान् ॥ ३ ॥

टीका—औ शिवका विवाह पार्वतीके संग करा-
वते भये. फिरि शिव पार्वतीकों सुरत करते करते
बहुत काल वितीत भया ॥ ३ ॥

तदावन्हिपुरस्कृत्यदेवाजग्मुखिलोचनम् ॥

दृष्ट्वातान्ब्रीडितादेवीहरंत्यक्त्वारतोत्सुका ४

टीका—तब सब देवता अग्निकों अग्रकरिके शिव-
जीके पास गए तब पार्वती देवतनकों देखिके लज्जा
करिके महादेवकों छोडिके अलग जाई बैठी, परंतु
मनमें सुरत दच्छा बनी रही ॥ ४ ॥

रेतोऽपतत्तदाभूमौतद्गृहीत्वाहुताशनः ॥ ते

नतप्तःपुनःक्षित्वादिक्षुभूम्यांपृथक्पृथक्॥५

टीका—तब महादेवका वीर्य पृथ्वीपर पडता भया.
सो वीर्य अग्नीनें ग्रहण किया. फिरि उस वीर्यके तेज-
करिके तप्त भया अग्निभी चारों दिशोंके विषे पृ-
थ्वीमें डालि दिया ॥ ५ ॥

तत्रजातोरसःकांतिकांताधररसप्रिये ॥ गौरी

शप्तउदीच्यादित्रिदिशास्थोनकार्यकृत् ॥६॥

टीका—तहां पारा उत्पन्न भया. सो पारा पार्वती-
की शापकरिके उत्तर पूर्व दक्षिण दिशामें स्थित
रसादि क्रिया योग्य नहीं है ॥ ६ ॥

पश्चिमायांतुर्यजातःसरसःसर्वसिद्धिदः ॥

एषोत्पत्तिःसमाख्यातारसज्ञेस्यरसस्यवै॥७॥

टीका—जो पश्चिममें पैदा भया सो सर्व कार्य योग्य है. हे रसके जाननेवाली प्यारी, यह पारेकी उत्पत्ति कही ॥ ७ ॥

वर्णभेदंप्रवक्ष्यामितंशृणुष्वसमाहिता ॥

श्वेतोविप्रोविशालाक्षिरक्तस्याक्षत्रियः

प्रिये ॥ ८ ॥ पीतवर्णोरसोवैश्यःश्यामः

शूद्रोऽलिकुंतले ॥ ब्राह्मणःश्रेष्ठएतेषांशो

धितःसर्वरोगहृत् ॥ ९ ॥

टीका—अब वर्णभेद कहता हौं सो सावधान व्हेके सुनो. हे विशालनेत्रे, श्वेत पारा ब्राह्मण है. रक्तवर्ण क्षत्रिय है. पीवला वैश्य, औ श्याम शूद्र है इनमें ब्राह्मण श्रेष्ठ है. शुद्ध भयेसें सर्व रोग हरता है ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथरसेदोषाः ॥ नागोवंगोऽग्निचांचल्यमस
ह्याग्निर्विषंमलम् ॥ गिरिश्रैतेमहादोषारसे
ऽशुद्धेवदंतिहि ॥ १० ॥

टीका—अथ पाराके सोभाविक दोष कहते हैं. नाग १, वंग २, अग्निमें रखनेसें चंचलता ३, औ अग्नि-

कों नसहना ४, विष ५, मैल ६, पर्वतका भाग ७,
ए सात दोष अशुद्ध पारेमें सदा रहते हैं ॥ १० ॥

अशुद्धोजाड्यतांकुण्टाहंवीर्यप्रणाशनं ॥ मू
छाँस्फोटंचमृत्युंचक्रमात्कुर्यान्मलैरसः ॥११

टीका—अथ दोषोंका कार्य. अशुद्ध पारा इतने
रोग करता है. नागसें जडता १, बंगसें कुष्ठ २,
अम्रिकी चंचलतासें दाह करता है ३, अम्रिकी
असह्यतासें वीर्यनाश करता है ४, विषसें मूर्छा
५, मैलसें देहमें फोडे ६, पर्वतके भागसें मृत्यु
करता है ७, इति ॥ ११ ॥

अथतच्छोधनं ॥ दरदंनिंबुनीरेणदिनमेकंवि
मर्दयेत् ॥ ऊर्ध्वपातनकेयंत्रेवहिंदत्वात्रिया
मकम् ॥ १२ ॥ स्वांगशीतेसमुद्धाट्यलग्नमू
र्ध्वैरसंनयेत् ॥ पुनर्विवस्यनिबोवारसैर्यामंवि
मर्दितः ॥ कंचुकैर्नागवंगार्द्यैर्मुक्तःस्यात्पार
दोत्तमः ॥ १३ ॥

टीका—अथ शोधन कहते हैं. हिंगलूकों निंबूके
रसमें एक दिन मर्दन करना. फिर उमरूयंत्रमें ती-
नि पहरकी आंच देना. फिर आपसें ठंडे होनेपी-
छे ऊपरके पात्रमें लगा पारा लै लेना. फिर निंबू या

निंबूके रसमें एक पहर मर्दन करनेसे नागवंगगादिक कांचलीसें छूटा पारा शुद्ध होता है ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथान्यः ॥ रसोनराजिकेपिष्टामूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ तत्रसूतंसुसंरुद्धस्वेदयेत्कांजिकैरुयहम् ॥ १४ ॥

टीका—दूसरा प्रकार. लहशून औ राई पीसिके दो मूसी बनावै. मूसिकों घरियाभी कहते हैं. उन मूसिके संपुटमें पारेकों बंद करिके कांजीमें दोलायंत्र करिके स्वेदन करै ॥ १४ ॥

ततःकुमारिकानीरैर्मर्दयेद्धारसरसम् ॥ चित्रकस्वरसैःपश्चाद्धारसरंमर्दयेत्ततः ॥ १५ ॥ काकमाचीद्रवैर्धस्त्रं वराकाथैस्ततोदिनम् ॥ ततस्तेभ्यःसमुद्धृत्यरसंप्रक्षाल्यकांजिकैः ॥ १६ ॥

टीका—फिरि कुमारिपाठेके रसमें एक दिन खरल करै. फिरि एक दिन चित्रकके रसमें खरल करै. फिरि एक दिन काकमाचीके रसमें जिसको मकोई औ पीचूडीभी कहते हैं. फिरि एकदिन त्रिफलाके काढेमें खरल करिके कांजीसें धोवै ॥ १५ ॥ १६ ॥

ततःखल्वेविनिःक्षिप्यतदर्धसैंधवान्वितम् ॥ दिनैकंनिंबुनीरेणमर्दयेदयिवल्लभे ॥ १७ ॥

टीका—फिरि पारासैं आधा सैंधव मिलाइके नीं-
बूके रसयुक्त एक दिन खरल करै ॥ १७ ॥

ततःसूतसमानेतान्गृहीत्वानवसादरम् ॥ रा
जिकांचरसोनंचप्रियेचैतैस्तुषांबुवा ॥ १८ ॥
संमर्द्यचक्रियांकृत्वाशोषयित्वाप्रलेपयेत् ॥ हिं
गुनाशोषयेत्पश्चादूर्ध्वपातनकेन्यसेत् ॥ १९ ॥

टीका—फिरि पारेकी बरोबर नवसागर, राई, लह-
शून इनकों लैके दनमें मर्दन करिके ठिकिया बना-
इके सुखावे, फिरि हिंगेलपन करे, फिरि सुखाइके
ढमरूयंत्रमें धरै ॥ १८ ॥ १९ ॥

तांचक्रिकामधस्थाल्यांपूरयेलवणेनहि ॥ अ
धःस्थालींततोमुद्रांदत्वादृढतरांबुधः ॥ २० ॥

टीका—नीचेकी हाडीमें वह ठिकडी धरिके ओ
उस हाडीकों लवणसैं भरि देई. फिरि दृढ मुद्रा देई ॥ २० ॥
विशोष्यस्थापयेच्चुह्यामधोवह्नित्रियामकं ॥
दत्त्वातीक्ष्णमुपर्यंबुनिषिंचेत्सुप्रयत्नतः ॥ २१ ॥

टीका—फिरि सुखावे. सुखे पीछे चूहेपर रखिके
तीनि पहर तीक्ष्ण अग्नि देई. ओ उपरकी हाडी ज-
लसैं ततबीत्साथ भीजी राखै ॥ २१ ॥

स्वांगशीतंसमुद्घाट्यतिर्यक्कृत्वाप्रयत्नतः ॥

अथोर्ध्वभांडसंलग्नगृण्हीयाद्रसमुत्तमं ॥ २२ ॥

टीका—स्वांगशीतल भये पीछे तिरछी करिके यत्न-
सँ खोलै. ऊपरकी हंडीमें लगा शुद्ध पारा लैलेई ॥ २२ ॥

पश्चाद्वलप्रकर्षायस्वेदयेद्वोलयंत्रके ॥ सिंधू
त्थचूर्णगर्भस्थं वस्त्रे बध्वात्तमोरसः ॥ २३ ॥

टीका—फिरि सैंधवके चूर्णके बीचमें रखिके व-
स्त्रमें बांधिके दोलायंत्रमें केवल जलसँ स्वेदन करै,
तौ पारा बलवान होता है ॥ २३ ॥

अथ रसजारणं ॥ तत्र सामान्यतः षड्गुणव
लिजारणम् ॥ ससूतमल्पकं भांडं वालुकायं
त्रकेन्यसेत् ॥ षड्गुणं गंधकं तत्र क्षिपेदल्पाल्प
कंशनैः ॥ २४ ॥

टीका—अथ रसजारण, तहां सामान्यसँ छ गुना
गंधक जारण कहते हैं. छोटे मृत्तिकाके पात्रमें पारा
रखिके वालुकायंत्रमें धरै. फिरि छ गुना गंधक थोरा
थोरा ऊपरसँ डारता जाई ॥ २४ ॥

द्रवीभूतवलिंज्ञात्वा शीघ्रमुत्तार्य यत्नतः ॥ स्वा
गशीते दृढे गंधे स्फोटयित्वानयेद्रसम् ॥ २५ ॥

टीका—जब गंधक गलिजाई तब धीरेसँ उतारि-

लेई. जब ठंडा होई तब गंधककों फोरिके शुद्ध पारा निकासि लेई ॥ २५ ॥

सर्वरोगहरःसूतोहरःपापहरोयथा ॥ पतिप्रा
णप्रियेकांतेयत्तेहरिहरार्चने ॥ २६ ॥ (य
त्तासावधाना) ॥

टीका—सो पारा सर्व रोगका हरनेवाला है, जैसे महादेव सर्व पाप हरनेवाला है ॥ २६ ॥

अथषड्गुणगंधकजारणफलं ॥ समांशेगंध
केजीर्णेशुद्धाच्छतगुणोरसः ॥ गंधकेद्विगुणे
जीर्णैसर्वकुष्ठनिपूदनः ॥ २७ ॥

टीका—अथ छगुणगंधक जारणेका फल, पारेके समान गंधक जीर्ण होनेसें शुद्धसेंभी सौ गुणा उत्तम पारा होता है, दूना गंधक जीर्ण होनेसें कुष्ठ-नाशक होता है ॥ २७ ॥

गंधकेत्रिगुणेजीर्णैजाड्यहारसउत्तमः ॥ जी
र्णैचतुर्गुणेगंधेवलीपलितजिद्रसः ॥ २८ ॥

टीका—त्रिगुण गंधक जीर्ण होनेसें जडताकों हरता है, चौगुणा जीर्ण होनेसें बलीपलितनारक होता है ॥ २८ ॥

गंधेवाणगुणेजीर्णेक्षयक्षयकरःशिवः ॥ गंधे
रसगुणेजीर्णेसर्वांतकप्रणाशनः ॥ २९ ॥

टीका—पंचगुण जीर्ण होनेसें क्षयरोगहारक होता है. छगुणा गंधक जीर्ण होनेसें सर्व रोगहारक होता है ॥ २९ ॥

सत्यंसत्यंशिवोदेवीमुवाचस्वप्रियामये ॥ त्वां
वदाम्यरविंदाक्षिहितायजगतामपि ॥ ३० ॥

टीका—हे प्राणकुमारि, यह सत्य है. शिवजीनें आपकी प्रिया पार्वतीसें कहा है. मैंभी जगतके उ-
पकारके वास्ते तुमसें कहता हौं ॥ ३० ॥

जारणस्यविशालाक्षिशृणुमाहात्म्यमुत्तमम् ॥
सर्वपापेप्रणष्टेहिप्राप्यतेसूतजारणम् ॥ ३१ ॥

टीका—अब जारणको माहात्म्य सुनौ. जब सर्व पा-
प नष्ट होते हैं तब पारेका जारण प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥

तस्मिन्प्राप्तेहिविज्ञानंप्राप्यतेमुक्तिलक्षणं ॥
यथासूर्योदयेप्राप्तेप्रकाशंप्राप्यतेजनैः ॥ ३२ ॥

टीका—तिसके प्राप्ति होनेसें मुक्तिलक्षण विज्ञान
प्राप्त होता है. जैसे सूर्योदयसें प्रकाश प्राप्त होता है ३२
यावद्वस्त्राणिवन्हिस्थंरक्षयेत्पारदंप्रिये ॥ ता
वदब्दसहस्रांतंशंभुलोकेमहीयते ॥ ३३ ॥

टीका—इनके संग पारा मिलाइके धानके तुपकी अग्निपर खरल रखिके तीनि दिन मर्दन करै तो पारा भूषा होता है. औ सर्व धातकों खाता है ॥ ४० ॥
 अथमारणविधिः ॥ गंधकंनवसारंचसौराष्ट्रीं
 धूमसारकम् ॥ रसंभागैःसमान्सर्वान्यामम
 म्लेनमर्दयेत् ॥ ४१ ॥ मृद्वस्त्रवेष्टितायांत
 त्काचकूप्यांविनिःक्षिपेत् ॥ वक्रैकूप्यादृढांसु
 द्रांदत्वासम्याग्विशोषयेत् ॥ ४२ ॥

टीका—अथ मारण. गंधक, नवसादर, सोरठी, माटी जो सोरठी माटी न मिले तो फटकरी धर्म-का क्षुवां औ पारा ये समभाग लेई एक पहर को-इभी खटाइसैं मर्दन करै पीछे कपरमाटी करीभट्टे शीशीमें भरे. फिरि शीशीके मुखमें दृढ मुद्रा देके सुखावै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अधश्छिद्रान्वितेभांडेपंचास्येमृन्मयेन्यसेत् ॥
 कूपिकांवालुकापूरैःपूरयेदागलंचताम् ॥ ४३ ॥
 पंचास्येविरुततमुखे ॥

टीका—फिरि एक रूडागहिरा महीका लेई जि-सके नीचे छिद्र करै जिसपर शीशी रखिके शीशीके गलेपर्यंत वालू रेत भरे ॥ ४३ ॥

चुह्यांसंन्यस्यशनकैरग्निदत्त्वाविधया
मकं ॥ पश्चाद्विवर्धयेद्वह्निं क्रमात्सम्य
क्प्रयत्नतः ॥ ४४ ॥ एवंद्वादशभि
र्यामैः पारदो भस्मतां व्रजेत् ॥ स्वांग
शीतां हितां कूर्पीं स्फोटयेन्मधुरस्वरे ॥ ४५ ॥

टीका—फिरि धीरेसें चूल्हेपर धरै, फिरि चारी
पहरकी मद आंच देई फिरि तेज आंच क्रमसें ब-
ढावै, ऐसे बारह १२ पहरकी आंचसें पारा भस्म
होता है, फिरि आपसें शीतल भएपर शीशीकों
फोडै ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

ऊर्ध्वलघ्नं त्यजेद्गन्धमधस्थं पारदं मृतं ॥ गृहीत्वा
सर्वकार्येषु योजयेदामयापहम् ॥ ४६ ॥

टीका—शीशीमें ऊर्ध्व लगा गंधक छोडि देई औ
नीचे मरा पारा लैलेई सो सर्व कार्य करनेवाला है,
औ रोगनाशक है ॥ ४६ ॥

अथान्यः प्रकारः ॥ काष्ठोदुंबरिकादुग्धैर्मर्दये
त्पारदंततः ॥ अपामार्गस्य बीजानां मूषायु
ग्मे विमुद्रयेत् ॥ ४७ ॥

टीका—अथ तीसरा प्रकार, पारेको कटूमरीके दू-

धमें मर्दन करिके गोला बनाइ. फिरि अपामार्गके वीजोंके दोमूसै बनावै. जिसमें पारेका गोला धरे ॥ ४७ ॥

द्रोणपुष्पीप्रसूनानांविडंगमिरिमेदयोः ॥ क
लकैर्मूषांवलिल्प्यैवपरितोंगुलमात्रकम् ॥ ४८ ॥

टीका—फिरि द्रोणपुष्पी जो गूमा उसके पुष्प औ चायविडंग औ खैर इनकी लुगुदी मूसीके चौतरफ एक अंगुल फिरती लगावै ॥ ४८ ॥

तद्गोलंमृन्मयेन्यस्यमूषायुग्मेविमुद्रयेत् ॥ मृ
द्वस्त्रैःशोष्यनागाव्हेपाचयेद्विपुटेरसं ॥ भस्मी
भूतंरसंनेयंयोजयेत्सर्वकर्मसु ॥ ४९ ॥

टीका—फिरि उसको माटीके तंपुटमें रखिके कपरौटी करि सुखाइके गजपुट आंच देई ती पारा-भस्म सर्वकार्य योग्य होई ॥ ४९ ॥

अथान्यःप्रकारः ॥ मलयूदुग्धसंमिश्रंरसरा
जंविमर्दयेत् ॥ तदुग्धमिश्रहिं गोश्वमूषायु
ग्मेविमुद्रयेत् ॥ ५० ॥

टीका—अथ चौथा प्रकार. पारेकों कदूमरीके दूधमें मर्दन करै औ उसीके दूधमें होंग घोटिके दो मुसी बनावै तिसमें वह पारा भरै ॥ ५० ॥

तामूषांमृन्मयेरुध्वांमूषायुग्मेतुवेष्टयेत् ॥ मृ

द्वस्त्रैःसप्तभिः पश्चाच्छोपयेदातपेभृशम्॥५१
पुटेन्मृदुपुटेयत्नाद्रसोभस्मत्वमाप्नुयात् ॥ न
वयौवनसौंदर्यभूषणेमदिरेक्षणे ॥ ५२ ॥

टीका—फिर उस मूषाकों माटीके संपुटमें बंद
करिके सात कपरौटी करै. फिर सुखार्दके हलकी-
सी पुट देई तौ भस्म होई ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

अथान्यः ॥ नागवल्लीरसैःपिष्टःकर्को
टीकंदगर्भगः ॥ मृन्मूषासंपुटेपक्कोर
सोयात्येवभस्मताम् ॥ ५३ ॥

टीका—अथ पांचमा प्रकार, नागवेलीके पानके
रसमें खरल करिके बांझकंकोडीके मूलमें संपुट क-
रिके पुट देई तौ भस्म होई ॥ ५३ ॥

अथगुणाः ॥ रसोरसरसैर्युक्तःशोधितो
भस्मसात्कृतः ॥ त्रिदोषशमनःकामवर्ध
नःसर्वरोगहृत् ॥ ५४ ॥

टीका—अथ साधारणगुण. पारा छ रसकरिके
युक्त है सो पारा शुद्ध भस्म कियाभया त्रिदोषकों
शांत करता है, कामदेवकों बढ़ाता है औ सब रोगों
को हरता है ॥ ५४ ॥

कामिनीदर्पदलनःसुधास्पर्धोसुवर्णकृत् ॥ च
क्षुष्यःस्मृतिदौर्वल्योरूपदःकृमिकुष्ठहा ५५॥

टीका—कामिनी स्त्रीके दर्पकों दूरी करता है. अ-
मृततुल्य है. सुवर्णकारक है. नेत्रनिर्मल करता है.
स्मृति ओ बल औ रूपकों देनेवाला है. कृमी औ
कुष्ठकों नाश करता है ॥ ५५ ॥

जरामरणजाड्यघ्नोयोगवाहीवरांगने ॥ दह
त्यग्निस्तृणानीवधातुस्थानामयात्रसः॥५६॥

टीका—जराअवस्था, अपमृत्यु औ जडता इनका
नाशक है. औ योगवाही है जैसे अनुपानसें देई वे-
साही गुण करे जैसे अग्नि घासको जलाता है ऐसे
धातुगत रोगोंको पारा जलाता है ॥ ५६ ॥

अथदोषाःपूर्वमेवोक्ताःतच्छांतिःकथ्यते ॥ ग
वांदुग्धयुतंपीत्वागंधकंदिनसप्तकम् ॥ पार
दस्यविकारेणमुक्तःसुखमवाप्नुयात् ॥ ५७ ॥

टीका—दोष तौ पहले कहिआए. अब शांति क-
हते हैं. गार्दके दूधमें सात दिन गधक पीनेसें पारद-
विकार शांति होता है ॥ ५७ ॥

अथानुपानं ॥ गुंजैकमानमारभ्यचतुर्यं

जावधिनरः ॥ रसराजंप्रियेयुक्त्याभक्ष
येदनुपानतः ॥ ५८ ॥

टीका—अथ अनुपान. एक रतीसे लेके चारिरती-
तक पाराका सेवन बलाबल देपिके करे ॥ ५८ ॥

घृतवल्लिजचूर्णेनमगधामधुनाऽथवा ॥ मधू
च्छिष्टघृताभ्यांवासर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ५९ ॥

टीका—काली मरीच औ घृतसंग अथवा मधुपिप्प-
लीसंग अथवा घृतमधुसंग सर्व रोगमें देई ॥ ५९ ॥

पित्तेक्षीरसितायुक्तंपिप्पल्याथसमीरणे ॥ श्ले
ष्मण्याद्रकजैर्नीरैर्ज्वरेजंवीरजैरसैः ॥ ६० ॥

टीका—पित्तमें दूध शकरसंग, वातरोगमें पीपरीसा-
थ, कफमें आदेके रसयुक्त, ज्वरमें जभीरीके रसमें ॥ ६० ॥

मधुनारक्तविकृतौदघ्नातीसारकेगदे ॥ सम
तोयशृतंदुग्धंपीत्वापश्चात्सितायुतम् ॥ ६१ ॥

टीका—रक्तविकारमें मधुसाथ, अतीसारमें दही-
साथ, लैके उपरसें पथ्यमें यहकी दूधपानी मिलाइके
औटै. जव पानी सूपिके दूध रहै तिसमें शकर डा-
लिके पीवै ॥ ६१ ॥

रक्तातीसारकेदेयंमेघनादभवैरसेः ॥ प्रति
श्यायेकफेदुष्टेगुडसर्पिर्मरीचकैः ॥ ६२ ॥ पथ्ये

नंसदधिस्लिग्धंकवोष्णंभोजनेहितम् ॥ हित
मालिंगनंतेस्याद्यथामेमदनज्वरे ॥ ६३ ॥

टीका—रक्तातिसारमें चौलाइके रसमें चौलाइको तांडुळियाभी कहते हैं, जुपाममें औ कफांबगडेमें गुड मरीच घृतसाथ लैके तचिकणदहीकेसाथ गर-मागरम भोजन करै तौ हित है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

वीर्यवृद्धौतथास्तंभेमांषकूष्मांडयष्टिजैः ॥ चू
र्णैर्दुग्धसितायुक्तैर्मधुसर्पिर्युतैस्तुवा ॥ ६४ ॥

टीका—वीर्यवृद्धि तथा वीर्यबंधनेके वास्ते उडद, भूराकुसुडा, जेठीमधु जिसको मुलेठी कहते हैं इनके चूरणमें पाराभस्म लैके ऊपरसैं दूध शकर पिये अ-अथवा मधु घृतमें लेई ॥ ६४ ॥

तृतीयकेज्वरेपित्तेभ्रमेमधुसितायुतं ॥ ज
ग्ध्वामेघामृतारक्तधान्याकजलजंपिवेत् ६५
क्वार्थकमलभूकांतातुल्यशीलेमनोहरे ॥ सु
खीस्यात्तेरतावास्यचुंवनेनयथात्वहम् ॥ ६६ ॥
रक्तंरक्तचंदनं ॥ जलमुशीरं ॥

टीका—तृतीयज्वर, पित्त, भ्रम इनरोगोंमें मधु-शफायुक्त लेई फिरि तुरतही नागरमोथ, गिलोई,

रक्तचंदन, धणा, उशीर जिसको पसभी कहते हैं
उनका काढा पिये ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

रक्तपित्तकफेकासेश्वासेकाथेनसेवयेत् ॥
द्राक्षावासाशिवानांभोपथ्ययुक्तोवरां
गने ॥ ६७ ॥ शिवाहरीतकी ॥

टीका—रक्तपित्त, कफ, श्वास, कास इनमें द्राख
औ अरुसा, हरड इनके काढेमें लेटे ॥ ६७ ॥

मेदोगदेशालिमंडैर्वावुमाक्षिकसंयुतं ॥ भजे
द्रजास्यतुल्योऽपिरुथूलःकृशतरोभवेत् ॥ ६८ ॥

टीका—मेदरोगमें चावलके माडमें अथवा मधु
पानीसाथ ॥ ६८ ॥

नष्टपुष्पेरक्तगुल्मेशिवशस्त्राभिधेगदे ॥ का
थेकृष्णतिलोत्थेतुभांगीत्रिकटुहिंयुजैः ॥ ६९ ॥
चूर्णेस्तुसगुडैर्युक्तेरसभूतिर्निषेविता ॥ सुख
दातंयथारात्रौप्रियेशृंगारसंयुता ॥ ७० ॥

टीका—जिस स्त्रीका रज नष्ट भया होई सो ओ र-
क्तगुल्मवाली ओ शूलरोगमें भारगी, सोंठि, मिरच,
पीपरी, हिंग, गुड, इनके साथ लैके उपरसें काले ति-
लौका काढा पिये तो शीघ्र दुःख जाई ॥ ६९ ॥ ७० ॥

अथपथ्यं ॥ मुद्गघृषघृतंदुग्धंशाल्यन्नंसैंधवं
 तथा ॥ नागरंपद्ममूलंचमुस्तकंगिरिमल्लि
 का ॥ ७१ ॥ शाकंपौनर्नवंश्रेष्ठमेघनादंचवा
 स्तुकम् ॥ अभ्यंगंसुखदंस्नानंकोष्णतोयेन
 नित्यशः ॥ ७२ ॥

टीका—अथ पारा सेवनेमें पथ्य. मूगका जूप,
 घृत, दुग्ध, चावलका भात, सैंधव लवण, सोंठि,
 कमलकी जड़, मोथा, गिरमर, पुनर्नवाका शाक,
 चौलार्द्रका शाक, बधुवाकाशाक, तैलमर्दन, नित्य
 गरम जलसें नान ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

रूपयौवनसंपन्नांस्वानुकूलांभजेत्प्रियाम् ॥
 तेनबुद्धिर्वलंकांतिर्वर्धतेरससेविनः ॥ ७३ ॥

टीका—ओ रूपयौवनयुक्त आपकी प्यारी स्त्रीसें
 संग करे तो पारासेवनेवालेका बुद्धि, बल, कानि
 बढ़ाता है ॥ ७३ ॥

अथापथ्यं ॥ कलिंगंकर्कटीचैवकूष्मांडंकारवे
 ल्लकम् ॥ कुसुंभशाकंकर्कोटीकदलीकाकमा
 चिकाम् ॥ ७४ ॥

टीका—अथापथ्य. तरबूज, जिमको कलीदामी
 कहते हैं, कारुजी, कूष्मांड, कोला, कुसुंभरा

शाक, ककोडा, केला, कंद, काकमाची, जिसे मकोई कहे हैं ॥ ७४ ॥

ककाराष्टकमित्येतद्वर्जयेद्रससेवकः ॥ जरा व्याधिविनिर्मुक्तोजीवेद्वर्षशतंसुखी ॥ ७५ ॥

टीका—यै ८ ककारादि वस्तु रससेवक ह्यागै तौ जराव्याधिसँ मुक्त होईके सौवर्ष जिवै ॥ ७५ ॥

अथरसकर्पूरविधिः ॥ संक्षेपाद्विरसंपूर्वशो धयेच्छुद्धमानसे ॥ पश्चाच्छुद्धेनप्रत्येकंतुल्यं कृत्वारसेनहि ॥ ७६ ॥

टीका—अथ रसकर्पूरविधि. पहले संक्षेपसँ पारेको शुद्ध करै फिरि प्रत्येक द्रव्य जो अगाडी लिखि है सो पारेकी बरोवरी लेना ॥ ७६ ॥

गैरिकं खटिका मिष्टिसौराष्ट्रीं सैधवं तथा ॥ टंक णं क्षारलवणं मृत्स्ना चूर्णं सुसूक्ष्मकम् ॥ ७७ ॥
खटिका खरी ॥ इष्टि ईट इति प्रसिद्धा ॥ मृत्स्ना मुलतानी मट्टी तिलोके प्रसिद्धा ॥

टीका—गेरु, खडी, ईठ, सोरठी माठी अथवा फटकरी, सैधव लवण, टंकण औ खारीलोण, मुलतानीमाटी इनका वारीक चूरण करै ॥ ७७ ॥

एतच्चूर्णान्वितंसूतंयामैकमर्दयेत्ततः ॥ ऊर्ध्वं
पातनकेयत्रैवन्हिदद्याच्छनैःशनैः ॥ ७८ ॥

टीका—फिरि इस चूरणके संग एक पहरभरि
पारेको मर्दन करे, फिर ऊर्ध्व पातनयंत्रमें मंदमंद
आंच देई ॥ ७८ ॥

अहोरात्रैश्चतुर्भिश्चततोर्वैस्वांगशीतलं ॥ उ
द्धाट्योर्ध्वविलग्नं वैरसंकर्पूरसंज्ञिकम् ॥ ७९ ॥

टीका—चारि राति औ दिन आंच देई, फिरि
स्वयं शीतल भये पीछे खोलिके ऊर्ध्वपात्रमें लगा
रसकपूर लैलेई ॥ ७९ ॥

गृहीत्वा सर्वरोगघ्नं वलवृद्धिविवर्धनं ॥ घृताक
शतकैः शुद्धं भक्षितं गुणवत्तरम् ॥ ८० ॥

टीका—वह रसकपूर सर्व रोगका हरनेवाला है
औ वलवृद्धिका बढ़ानेवाला है, सैवैगनमें शुद्धादि-
या बहुत गुण देता है, शुद्ध ऐसे करे की, वैगनवे
बीचमें रसकपूर धरिके थोड़ीसी अग्निमें पचावै, जः
वैगन पकी जाई तब निकालिके दूसरे वैगनमें धरे,
ऐसे सौ १०० वैगनमें शोधे ॥ ८० ॥

करतूरिकाचंदनदेवपुष्पैः सकुंकुमैरब्जविलो

चनेयः ॥ कर्पूरकंपारदसंभवंनानिषेवयन्सं
जयतेफिरंगम् ॥ ८१ ॥

टीका—शुद्ध रसकपूर, कस्तूरी, चंदन, लवंग
केसरी, समभाग मिलाइ रती एक सेवन करै तौ
फिरंगरोग जाई ॥ ८१ ॥

सोपद्रवंविंदतिचाग्निदीप्तिवीर्यवलंपुष्टिभदी
र्घकालात् ॥ स्त्रीणांसमूहंरमयेत्प्रियेतंमयार
मस्वाद्यनिषेवितंमे ॥ ८२ ॥

टीका—ओ फिरंगके उपद्रवभी जाई. भूप बढावै.
वीर्यवलपुष्टि करै. स्त्रीके समूहसँ रमै ॥ ८२ ॥

अथदोषाः ॥ सेवितोऽविधिनाकुष्ठंसंधिवातं
कफादिकम् ॥ रसकर्पूरकःकुर्यात्तस्माद्यत्ने
नसेवयेत् ॥ ८३ ॥

टीका—अथ दोष. जो विधिहीन रसकपूर सेवन
करै तौ कुष्ठ, संधिशोथ, कफवात पैदा करै. इसवा-
स्ते यत्नसँ सेवन करै ॥ ८३ ॥

अथतच्छांतिः ॥ महिषीशकृतोनीरंधान्याकं
वासितायुतम् ॥ पिवेत्रीरेणमुक्तःस्याद्रसक
पूरजैर्गदैः ॥ ८४ ॥

टीका—अथ शांति. भैसके गोबरका पानी अथवा धणा औ शकर पानीसें पियै तौ रसकपूर-विकार जाई ॥ ८४ ॥

अथरससिंदूरविधिः ॥ शुद्धगंधरसाच्छुद्धाद-
र्धभागंविमिश्रयेत् ॥ तयोःकज्जलिकाकूप्यां
काचमय्यांविनिःक्षिपेत् ॥ ८५ ॥

टीका—अथ रससिंदूरविधि. शुद्ध पारेसें आधा शुद्ध गंधक मिलाई कजली करिके आतशी काचकी बीशीमें भरे ॥ ८५ ॥

मृद्वस्त्रैःकुटितैःकूर्पीलेपयेच्छोपयेत्ततः ॥ स्था-
पयेद्वालुकायंत्रेवन्हिंदद्याच्छनैःशनैः ॥ ८६ ॥

टीका—फिरि बीशीके ऊपर मृत्तिका और वस्त्र खूप कूटिके लेप करिके सुखावे. फिरि वालुका-यंत्रमें मंद मंद आंच देई ॥ ८६ ॥

चतुर्घस्त्रावधिंपश्चात्स्वांगशीतांहिकूपिकां ॥
स्फोटयेदूर्ध्वसंलग्नसिंदूराव्हंसंनयेत् ॥ ८७ ॥

टीका—ऐसें चारि दिनसाति निरंतर आंच देई फिरि आपसें ठढे होनेपर सीसीको फोडिके उसके ऊपरके भागमें लगा रससिंदूर लेलेवे ॥ ८७ ॥

अथान्यउत्तमप्रकारः ॥ पारदंगंधकंतुल्यंगं
धार्धनवसादरम् ॥ कज्जलींचित्रकक्वाथैस्त
तोन्मत्तदलांबुना ॥ ८८ ॥ कुमारीस्वरसैर्घ
स्रंपृथक्कृत्वाविमर्दयेत् ॥ काचकूप्यांविनि
स्थाप्यलेपयेत्कूपिकांप्रिये ॥ ८९ ॥

टीका—अथ दूसरी उत्तम विधि. पारा गंधक स-
मभाग, औ गंधकसें आधा नवसादर इनकी कज्जली
कै, तिस कज्जलीकों चित्रकके काढेमें औ धतुरेके
पत्रके रसमें औ धीकुमारिके रसमें न्यारा न्यारा एक
एक दिन मर्दन करे, फिर कांचकी शीशीमें भरके
ऊपर लेप चढावे ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

तद्विधानं प्रवक्ष्यामि तच्छृणु त्वंसमाहिता ॥
खटिकां लोहकिट्टं च चूर्णयेद्वस्त्रगालितम् ॥ ९० ॥

टीका—लेपका विधान कहीं सो तुम सुनौ. खडी औ
लोहका कीट सूक्ष्म चूर्ण करि कपडेमें छाने ॥ ९० ॥
लोहकिट्टचतुर्थींशं चूर्णं गोधूमसंभवम् ॥ दि
नैकं मर्दयेत् सर्वसवस्त्रं लेपयेच्चताम् ॥ ९१ ॥

टीका—औ लोह कीटका चौथा भाग गेहूका
आंटा मिलाइके एक दिन मर्दन करे फिर वस्त्रमें
लगाइके सीसीमें लेप लगावे ॥ ९१ ॥

कृपिकांशोषयेत्पश्चाद्विषयेच्छोषयेत्ततः ॥ स
सवारंप्रलिप्येवंशोषयेत्तानिधापयेत् ॥ ९२ ॥

टीका—फिरि सुखाइके फिरि लगावे, ऐसैं सा-
त कपरौटी करे ओ सुखावे ॥ ९२ ॥

वालुकायंत्रकेदद्यादग्निंयामचतुष्टयं ॥ स्वांग
शीतांतुसंस्फोट्यचोर्ध्वलग्नंरसनयेत् ॥ ९३ ॥

टीका—फिरि वालुकायंत्रमें चारि पहरकी अग्नि
देई, फिरि आपसैं सीतल भए पीछे सीसीकों फो-
डिके उपर लगा रस लैलेई ॥ ९३ ॥

सुरक्तरससिंदूरंख्यातंवैद्यवरैःप्रिये ॥ अनुपा
नयुतंदत्तंरोगजालविनाशनम् ॥ ९४ ॥

टीका—सुंदर लालवरण लोकप्रसिद्ध रससिंदूर
सो अनुपानयुक्त सेवन करनेसैं रोगसमूहकों नाश-
कारक है ॥ ९४ ॥

अथगुणाः ॥ हरतिचरससिंदूरंकासश्वास
क्षिमांश्चमेहगणान् ॥ रक्तविकारंरूच्छ्रंज्वरा
दिरोगान्यथानुपानयुतम् ॥ ९५ ॥

टीका—अथ गुण. कास, श्वास, मंदाग्नि प्रमेह र-
क्तविकार मूत्ररूच्छ्र औरभी ज्वरादिक रोगोंकों योग्य
है. अनुपानसैं रससिंदूर हरना है ॥ ९५ ॥

अथदोषस्तच्छांतिश्च ॥ रससिंदूरमशुद्धाद्र
साद्विजातंपारदवद्रोगान् ॥ कुर्याच्चैतच्छांत्यै
घृतमरिचरजःपिवेत्सप्तदिनम् ॥ ९६ ॥

टीका—अथ दोष औ दोषकी शांति. जो अशुद्ध
पारेसैं रससिंदूर बनता है सो पाराकी तरह रोग क-
रता है, तिसकी शांतिके वास्ते काली मरीच औ
घृत सात दिन पिवै ॥ ९६ ॥

अथानुपानं ॥ गुंजादिमानमारभ्यचतुर्गुंजा
वर्धिप्रिये ॥ दद्यात्कालवयोवन्हिदेशान्दृष्ट्वा
मयंवलम् ॥ ९७ ॥

टीका—अथ अनुपान. एक रतीसैं चारि रतीतक
रससिंदूर काल, अवस्था, अग्नि, देश, रोग, बल
देखिके देना ॥ ९७ ॥

पिप्पलीमधुसंयुक्तंवातमेहनिवारणम् ॥ सि
तोपलावरायुक्तंपित्तमेहंवरंगने ॥ ९८ ॥

टीका—वातप्रमेहमें मधुपिप्पली साथ, पित्तप्रमेहमें
त्रिफलाचूर्ण औ मिश्रीसाथ ॥ ९८ ॥

भार्ङ्गोऽधूपणमाक्षीकःकसनश्वासश्चलनुत् ॥
सितारात्रिसमायुक्तंरक्तदोषंविनाशयेत् ९९

टीका—भारंगी, सुंठि, मरीच, पीपरी, मधुसंग
कास, श्वास, शूलरोगमें. औ रक्तदोषमें हलदि शकर
संयुक्त ॥ ९९ ॥

कामलापांडुमंदाग्निचरात्र्यूषणयुग्जयेत् ॥ य
थाविष्णुःश्रियायुक्तोहृदिस्थोभक्तपातकान् ॥

टीका—कामला, पांडु, मंदाग्नि इन रोगोंमें त्रि-
फला औ त्रिकटुके चूर्णमें ॥ १०० ॥

दृद्रोगंवद्धकोष्ठंचवन्हिमांधादिकान्गदान् ॥
जयेच्चित्रकपांचालीशिवासौवर्चलान्वितं ॥ १

टीका—हृदयरोग, वद्धकोष्ठ, मंदाग्नि इनमें चित्रक,
पीपरी, हरड, संचलसंग देना ॥ १ ॥

शिलाजतुसितैलाभिर्मूत्रकृच्छ्रापनुद्भवेत् ॥
सौवर्चलवरायुक्तेरेचयेन्नवयौवने ॥ २ ॥

टीका—शिलाजतु, शकर, इलायची इनसंग मू-
त्रकृच्छ्र रोगमें देई. त्रिफला औ संचल लवणसंग
लेनेसें रेचन करे ॥ २ ॥

जातीपत्रीलवंगाफूभंगापिप्पलिकुंकुमेः ॥ क
पूरेणचसंयुक्तंधातुवृद्धिकरंपरम् ॥ ३ ॥

टीका—धातुवृद्धिकेवास्ते जायपत्री, लवंग, अफीम,
भांग, पीपरी, केसर औ कपूर साथ लेई ॥ ३ ॥

लवंगरुच्यकशिवायुक्तंसर्वज्वरापहम् ॥ प्रि
येभंगाजमोदाभ्यांछर्दिरोगप्रणाशनम् ॥ ४ ॥

टीका—सर्व ज्वरमें लवंग, संचल हरडयुक्त. छर्दि
रोगमें भांग औ अजमोदासंग ॥ ४ ॥

लवंगकुंकुमयुतेनागवल्लिदलोद्भवे ॥ वीटके
वापिकूष्मांडचूर्णेस्याद्वातुवर्धनम् ॥ ५ ॥

टीका—वातुष्टद्विकेवास्ते पानके बीडेमें रससिंदूर
लवंग केसर रखिके देई. वा कूष्मांडचूर्णसाथ ॥ ५ ॥

गुडपर्पटसंयुक्तंकृमीनूकोष्ठगतानूजयेत् ॥ ल
वंगभंगाफूकैश्चसर्वातीसारनुत्प्रिये ॥ ६ ॥

टीका—पेटके कीडे जानेकेवास्ते पित्तपापडा औ
गुडमें देई. सर्व अतिसारमें लवंग भांग अफीममें ॥ ६ ॥

दीप्यसौवर्चलोपेतंवन्हिमांधापहंपरम् ॥ पो
ष्टिकेप्यमृतासत्वसंयुतंपुष्टिकारकम् ॥ ७ ॥

टीका—अग्निमांथमें अजमोद औ संचललोहसाथ
देई. पुष्टिकेवास्ते गिलोदके सत्वमें देई ॥ ७ ॥

वातमाक्षिकपांचालीचूर्णयुक्तंविनिर्जयेत् ॥
सितोपलायुतंपित्तंजयेदंबुजलोचने ॥ ८ ॥

टीका—वातरोगमें पीपरी मधुसंग देई. पित्तमें
मिश्रीसंग देई ॥ ८ ॥

त्रिकटुमिश्रितं हन्यात्कफरोगं सुदारुणम् ॥ अ
न्यान् रोगान् जयेद्युक्तया यथा योग्यानुपानकैः

टीका—कफरोगमें सोंठि, मिरच, पीपरी, चित्रक-
संग, और रोगोंको अपनी बुद्धिसँ अनुपानयुक्त करै ॥ ९

पथ्यं पारदवत्सर्वसेवयेद्देहरिं स्मरन् ॥ नवकं
जविशालाक्षिप्रियेपीनपयोधरे ॥ ११० ॥

इति श्रीपंडितरघुनाथप्रसादविरचिता
यामनुपानतरंगिण्यां रसानुपानकथने तु
तीयावीचिः ॥ ३ ॥

टीका—पथ्य पाराके तुल्य. इसको लैके हरिस्म-
रण करै ॥ ११० ॥

इति श्रीरमण विहारीकृतायां अनुपानतरंगिणी-
टीकायां नौकाख्याया तृतीयः कोष्ठकः ॥ ३ ॥

अथ गंधकः तत्र भेदाः ॥ श्वेतो रक्तस्तथा पी
तः कृष्णो गंधश्चतुर्विधः ॥ क्रमाद्विप्रादिकैर्व
र्णैः श्वेतः स्याद्द्रवणलेपने ॥ १ ॥

टीका—अथ गंधकविधि—नन गंधकभेद. श्वेत,
रक्त, पीत औ कृष्ण गंधक चारि प्रकारका है. श्वेत
ब्राह्मण, रक्त क्षत्रिय, पीत वैश्य, कृष्ण शूद्र है. तथा
श्वेत घाउमें लेपन योग्य है ॥ १ ॥

रक्तःस्वर्णक्रियासूक्तःपीतवर्णोरसायने ॥ कृ
ष्णःसर्वक्रियासूक्तोजनैरप्राप्यएवसः ॥ २ ॥

टीका—रक्त स्वर्णक्रियामें, पीत रसायनमें, रसा-
यन उसको कहते हैं. जिससे बुद्धिवल बढे औ
जराव्याधिका नाश होई. कृष्ण सर्वकार्य योग्य है
परतु अप्राप्य हे ॥ २ ॥

अथशुद्धिः ॥ लोहपात्रेविनिःक्षिप्यगंधकंगो
घृतंसमम् ॥ द्रुतेगंधेतुगोक्षीरेक्षितःशुद्ध्यति
गंधकः ॥ ३ ॥

टीका—अथ गंधक शुद्धि. लोहके पात्रमें गंधक
औ घृत समभाग मिलादके मद अग्नीसें गरम करे,
जब पतला होई तब गोदुग्धमें बुझावै. तो शुद्ध
होई ॥ ३ ॥

अथानुपानं ॥ मापकादशमाशांतंशुद्धंगंधं
निषेवयेत् ॥ शिरोव्रणेशिरःशूललेपयेद्यव
कांजिकैः ॥ ४ ॥

टीका—एक मासेसे दशामासेतक शुद्ध गंधक से-
वन करना चाहिये. मस्तरुमें जत्र व्रण होई वा शूल
होई तो कांजीसंग लेपन करना ॥ ४ ॥

नेत्ररोगंवरायुक्तोगोघृतेनव्रणंजयेत् ॥ मधु

नाज्येनवाहन्यादंजितःशुक्रमाक्षिकम् ॥ ५ ॥
आक्षिकंशुक्रंफूली ॥

टीका—नेत्ररोगमें त्रिफलासंग खाई, वणरोगमें घृतयुक्त लेई, नेत्रकी फूलीपर मधुमें अथवा घृतमें अंजन करे ॥ ५ ॥

सवल्लिजगवाज्येनपिप्पलीगोघृतेनवा ॥ ज
येत्कासंतथाश्वासंवहतीफलसर्पिपा ॥ ६ ॥

टीका—कासमें गोघृत मरिचसंग, अथवा गोघृत पीपरीसंग, श्वासमें मटकटैयाका फल जिसकों भूरिंगणीभी कहते है उसके फल औ घृतसाथ ॥ ६ ॥

मगध्रामधुसंयुक्तःस्वरभंगंजयेदयम् ॥ पा
श्वशूलंतथानागवल्लिनीरेणगंधकः ॥ ७ ॥

टीका—स्वरभंगमें मधुपिप्पली साथ, पार्श्वशूल याने पशूलीकी शूलमें नागवेलिके रसयुक्त देई ॥ ७ ॥

विपूचीनिंबुनीरेणप्रमेहंसगुडोजयेत् ॥ धा
त्रीफलरजोयुक्तोगंधकोऽयमजीर्णहा ॥ ८ ॥

टीका—विपूचिकारोगमें निंबूके रसमें, प्रमेहमें गुडसाथ, अजीर्णमें आमलाके चूर्णसाथ देई ॥ ८ ॥

पामादींस्तितेलेनग्रहणीविश्वसर्पिपा ॥ भ
क्षितोनिंबपचांगैःकुष्ठंकष्टतरंदहेत् ॥ ९ ॥

टीका—पामा याने खजुलीमें तिलके तेलमें, संग्रहणीमें सोंठि घृतसाथ, कुष्ठ रोगमें नींबूके पंचागसाथ देई ॥ ९ ॥

वातरोगान्जयेद्वधःसाज्येनस्वरसांघुना ॥ पि
त्तरोगान्गवाज्येनगुडविश्वयुतःकफम् १०

टीका—वातरोगमें तुलसीका रस औ घृतसें पित्तरो-
गमें गोघृतसाथ, कफमें गुड सोंठिसाथ देई ॥ १० ॥
वाज्यजामूत्रगोक्षीरघृतशुंठियुतंवलिम् ॥ टं
कमारभ्यकर्षांतमब्दैकंभक्षयेद्वियः ॥ ११ ॥

टीका—घोडेका औ बकरीका मूत्र, गार्इका दूध,
घृत, सोंठि इनके साथ एक टकसें लैके तोलापर्यंत
एक वर्ष सेवन करे ॥ ११ ॥

जराव्याधिविनिर्मुक्तःसजीवेच्छरदांशतम् ॥
वरामार्कवच्चूर्णेनसेवेदब्दंजरांजयेत् ॥ १२ ॥

टीका—तौ जराव्याधिसें रहित होइके सौ वर्ष
जिये औ त्रिफला औ भंगराके चूरणमें एक वर्ष
लेई तौ वृद्धापन मिटे ॥ १२ ॥

कुष्ठेविषविकारेचनिर्गुडीस्वरसान्विताम् ॥ र
सरांभ्रभवांसस्यक्कज्जलीलेपयेत्सुधीः ॥ १३ ॥

टीका—कुष्ठमें औ विषविकारमें निर्गुडीके रससं-

ग पारा गंधककी कजली लेप करै ॥ १३ ॥
 वलिपंचपलंशुद्धंमार्कवस्वरसैःसमैः ॥ घृत
 शुष्कस्यतस्यार्धंशिवाचूर्णंविमिश्रयेत्॥१४॥

टीका—गंधक बीस तोला, भंगरेका रस बीस तोला, खरल करि सुखावै औ तिसका आधा हरड-का चूरण मिलावै ॥ १४ ॥

मासयुग्मंनिषेवेतमाक्षिकाज्यविमिश्रितं॥वा
 र्धक्येनविनिर्मुक्तःशक्तिमान्वीर्यवान्भवेत्१५

टीका—फिरि घृतमधुसाथ दोमहिना सेवै तौ वृद्ध-पनासैं छूटिकै शक्तिवंत औ वीर्यवंत होई ॥ १५ ॥

कुष्ठतैलयुतंभुक्त्वागंधकंचानुसेचयेत्॥ अं
 गेशीततरंनीरंजयेदेवनचान्यथा ॥ १६ ॥

टीका—कुष्ठरोगी तेल साथ गंधक खाइके शरीरप-र ठंडा पानी सींचै तौ आराम होई ॥ १६ ॥

विकारोयदिजायेतगंधकाच्चेतदापिवेत् ॥ गो
 घृतेनान्वितंक्षीरंसुखीस्यादपिमानुपः॥१७॥

टीका—जो गंधकसैं विकार होई तौ गोघृत दूध-संग पीयै तौ सुखी होई ॥ १७ ॥

इतिश्रीपंडितरघुनाथप्रसादविरचिता

यामनुपानतरंगिण्यांगंधानुपानकथने
चतुर्थीवीचिः ॥ ४ ॥

टीका—इति श्रीरमणविहारीकृतायामनु० नौकाख्या-
यां चतुर्थः कोष्टकः ॥ ४ ॥

॥ अथकेपांचिदुपरसानांविधिः ॥

॥ तत्रतावल्लोकनाथोरसः ॥

पारदंगंधकंशुद्धंसमभागांविमर्दयेत् ॥ टंकणं
पारदादर्ध्वराटाःस्युश्चतुर्गुणाः ॥ १ ॥

टीका—अथ उपरसविधि. तहां पहले लोकनाथ-
रस लिखते हैं. शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक दोनों सम-
भाग लैके कंजली करे औ पारासैं आधा टंकणक्षार
लेटे औ पारेसैं चोगुणी कौडी लेटे ॥ १ ॥

शरावसंपुटेसम्यक्पाचयेत्स्वांगशीतलम् ॥
पेषयित्वाप्रयत्नेनस्थापयेत्काचभाजने ॥४॥

टीका—शरावसंपुटमें गजपुट आंच देई. स्वांग शी-
तल भए पीछे पीसिके काचकी सीसीमें भरि राखे ॥४॥

अथानुपानं ॥ लोकनाथरसवालेगृहीत्वावल्ल
कद्वयम् ॥ विंशन्मरिचचूर्णेनयुक्तंदत्वावरां
गने ॥ ५ ॥

टीका—अथ अनुपान. छ रती लोकनाथरसमें वीत
मरिचका चूर्ण मिलावै औ रोगीका बल देखिके एक
रतीसैं छतक देई. विन विचारे औ विन गुरु कोईभी
रस मात्रा देइगा सो पापका भागी होइगा ॥ ५ ॥

प्रतिरोगेऽनुपानानिपृथक्कृत्वावदाम्यहम् ॥
सर्पिपावातिकंरोगंनवनीतेनपैत्तिकम् ॥६॥

टीका—अब न्यारा न्यारा अनुपान कहता हौं
न्यारे न्यारे रोगोंका. वातरोगमें धीसैं, पित्तमें मा-
खनसैं देई ॥ ६ ॥

कफामयंनिहंत्येवमाक्षिकेणनितंविनि ॥ य.
थाहिसुरतोहन्यात्कफरोगानशेषतः ॥ ७ ॥

टीका—कफरोगमें मधुयुक्त नाश करते है ॥ ७ ॥

धान्याकंनिस्तुपंकृत्वाभर्जयित्वासुपेषयेत् ॥

तच्चूर्णेनसिताब्धेनलोकनाथोऽरुचिंजयेत् ८

टीका—धनियांकों छिलका दूर करिके सेकै, फिरि पीसिके शक्कर मिलाई उसमें लोकनाथ लेई तौ अरुचि जाई ॥ ८ ॥

धान्यच्छिन्नाकषायेणज्वरंहन्यादसंशयम् ॥
मधुपिप्पलिसंयुक्तोलोकेशोवाजयेज्ज्वरम् ९

टीका—धनिया औ गिलोर्डके काढेमें लेई तौ ज्वर जाई. अथवा मधुपिप्पलीसैं लेई ॥ ९ ॥

रक्तपित्तंकफकासंश्वासंचस्वरवैकृतिम् ॥ वृष
वाल्कषायेणसितामधुयुजाहरेत् ॥ १० ॥

टीका—रक्तपित्त, कफ, कास, श्वास, स्वरभंग इनरोगोंके नाशकेवास्ते अरूसा औ सुगंधवालाके काढेमें मधु औ मिश्रीयुक्त लेई ॥ १० ॥

अनिद्रतामतीसारंग्रहणीमग्निमांद्यतां ॥ भ
र्जितेषज्जयाचूर्णमाक्षिकाभ्यांविनिर्जयेत् ११

टीका—जो निद्रा न आती होई तौ औ अती-सार, संग्रहणी, मंदाग्नि इनरोगोंमें किंचित् अग्निमें सेकी भई भांग औ मधुसंग लेई ॥ ११ ॥

संचलाभयाकणारजोन्वितंनिपेवयेत् लोक
नाथकंजलंपिवेत्कवोष्णकंततः ॥ शूलमाशुः

संजयेद्विजीर्णमेवतत्क्षणं मंजुकोकिलस्वरेश
रत्सरोजलोचने ॥ १२ ॥

टीका—जो संचललवण, हरड, पीपरी, इनके
चूरणमें लैके किंचित् गरम जल पिये तो गूल औ
अजीर्णकों एक क्षणमें जीते ॥ १२ ॥

प्रीहानंछर्दिमर्शोसिरक्तपित्तंविनिर्जयेत् ॥ दा
डिमीफलनीरेणलोकनाथंनिषेवयन् ॥ १३ ॥

टीका—प्रीहा, छर्दि, अर्श, रक्तपित्त, इन रोगों-
में अनार जिसे दाडिमभी कहते हैं उसके फलके
रसमें लेई ॥ १३ ॥

घृष्टादूर्वारसैःसार्धहारिणंशृंगकंजयेत् ॥ लो
कनाथयुतंनस्येदत्वारक्तस्त्रुतिंनसः ॥ १४ ॥

टीका—जो नासिकासँ रक्त गिरता होई तो दूध
जिसे गुजराती द्रो कहते हैं उसके रसमें हरिणका
सींग घसिके ओ लोकनाथ मिलाइके नास देई ता
रक्त गिरना बंद होई ॥ १४ ॥

वर्हभस्मकणाकोलमज्जचूर्णसितामधु ॥ लो
कनाथयुतंलीढ्वाछर्दिहिकांचसंजयेत् ॥ १५ ॥

टीका—छर्दि औ हिचकी रोगमें मोरपंखकी भस्म

पीपरी वोरकी मीमी याने वोरकी गुठलीका मगज,
मिश्री, मधु, इनके लोकनाथ लेई ॥ १५ ॥

तेनतेनानुपानेनयुक्त्यातंगंधदंजयेत् ॥ लो
कनाथेनसद्वैद्यःप्रायश्चित्तैरघानिव ॥ १६ ॥

टीका—औरभी रोगरोगके अनुसार अनुपानयुक्त
करिके वैद्य रोगीकों देई तौ सुखी होई ॥ १६ ॥
इति लोकनाथरसः ॥

अथवाजिवर्मरसः ॥ गंधकंपारदंयूपणंटंक
णंदंतिबीजंवरांविष्णुबीजंविषम् ॥ मर्दये
ङ्गराजस्यनीरैर्दिनंरक्तिकैकावटीवाजिवर्मा
रसः ॥ १७ ॥

टीका—अथ वाजिवर्मरसः. गंधक, पारा, सोंठि,
मिरच, पीपरी, टंकण, जमालगोठा, हरड. बहेडा,
आमला, हरिताल, बछनाग, इन सबका सूक्ष्म चूरण
भांगरेके रसमें एक दिन मर्दन करिके एक रतीप्रमाण
गोली करै यह वाजिवर्मरस है ॥ १७ ॥

अथानुपानं ॥ वटीमेकांनरःखादेद्वे
वाकंजविलोचने ॥ पथ्ययुक्तोगदंह
न्याद्यथारोगानुपानतः ॥ १८ ॥

टीका—अथ इसके अनुपान. एक अथवा दोगोली रोग बल देखिके अनुपानसें देई, तौ रोग मिटे ॥ १८ ॥
 वातशूलक्षयकासंश्वासंमूलकनीरतः ॥ हन्ति
 वाशृंगवेरांबुपिप्पलीमधुतःप्रिये ॥ १९ ॥

टीका—वातशूल, क्षय, कास, श्वास, इनमें मूरि-
 के पत्ररसमें वा आदेकारस पीपरी मधुयुक्त देई ॥ १९ ॥

वलीपलितरोगघ्नोवाजिवर्मासमाक्षिकः ॥ शि
 युमूलांबुगोसर्पिर्युतःशूलज्वरंजयेत् ॥ २० ॥

टीका—वलीपलितमें मधुयुक्त, शूल औ ज्वरमें
 सहिजनकी जडका रस औ गार्ङ्गके घृतयुक्त, सहिजन-
 कौ सेगटाभी कहते हैं ॥ २० ॥

मस्तुनाजीर्णकंशीतज्वरमंबुजबीजकैः ॥ पु
 नर्नवायुतःपांडुतंबुलांडुयुतोविपम् ॥ २१ ॥

टीका—अजीर्णमें दहीके पानीसें. शीतज्वरमें क-
 मलके बीजसंयुत. पांडुमें पुनर्नवायुक्त. विपमें चाव-
 लके धोवनसें ॥ २१ ॥

तिलपर्णीरसैरक्ष्णोरंजितोतद्गदापहः ॥ शर्क
 राजाजिसंयुक्तोज्वरं पित्तभवंजयेत् ॥ २२ ॥

टीका—नेत्ररोगमें तिलपर्णिकि रसमें अंजन करे.
 पित्तज्वरमें शर्करा जीरासंयुक्त ॥ २२ ॥

काथेनास्तिगतंवातंदेवकाष्ठवचारु
जाम् ॥ जातीफलान्वितोऽर्शोसिवा
तशूलंकटुत्रिकैः ॥ २३ ॥

टीका—अस्थिगतवातमें देवदारु, वच, कूटके
काठमें, कूटको उपलेटभी कहते हैं. अर्शरोगमें जा-
यफलसाथ. वातशूलमें त्रिकटुसाथ ॥ २३ ॥

गोमूत्रेणनरःखादन्पुरुषत्वमवाप्नुयात् ॥ पुत्र
जीवारसैर्वालेवंध्यास्यादेवगर्भिणी ॥ २४ ॥

टीका—गोमूत्रसे पुरुषत्वप्राप्ति होई. पुत्रजीवा
जिसै पति जियाभी कहते हैं उसके रसमें बांझभी
गर्भोण होई ॥ २४ ॥

लितःसर्पविषदंशेहंतिनिंबुरसैस्तुवा ॥ शिरी
षस्वरसैर्वाज्येनावदनादरसैर्हिवा ॥ २५ ॥

टीका—जहां सर्पनें काटा होई उस जगहपर
नींबूके रसमें शिरीषके रसमें वा घृतमें वा चौलाडके
रसमें घसिके लेप करै ॥ २५ ॥

वचादीप्ययुतोहंतिकटिपीडांमरूद्गवां ॥ कस
नंश्वसनंहंतिमधुवासारसान्वितः ॥ २६ ॥

टीका—जो वायुसें कमरमें दर्द होई तौ वच ओ

अजमोदासाथ लेई. कास श्वासमें अरुतेका रस औ
मधुमें ॥ २६ ॥

ज्वरंहंतिविशालाक्षिसुरसास्वरसांजितः ॥ त
थानित्यज्वरंहंतिभक्षितःकन्यकांबुना ॥ २७ ॥

टीका—तुलसीके रससें अंजन करनेसें ज्वर जाई.
कुमारिपाठाके रससें खाई तौ नित्यज्वर जाई ॥ २७ ॥

नारीदुग्धेननक्ताध्यमूर्ध्वश्वासंवरायुतः ॥ हं
तिदाहयुतंपित्तज्वरमामलकान्वितः ॥ २८ ॥

टीका—छीके दूधसें अंजन करै तो रतींधी जाई.
बिफलासंग खानेसें ऊर्ध्वश्वास जाई, अमलायुक्त
देनेसें दाहयुक्त पित्तज्वर जाई ॥ २८ ॥

सेतिकाघृतसंयुक्तःसर्वशूलानिसंजयेत् ॥ शि
ग्रमूलांबुगोसर्पिर्माक्षिकैर्वाविचक्षणे ॥ २९ ॥

टीका—सर्व शूलमें घृत औ सुवा जिस सोयाभी
कहते हैं तिसके संग वा सहिजनकी जड़का रस
घृतमधुयुक्त देई ॥ २९ ॥

कर्णरोगशिरोव्याधिपीनसार्धावभेदकान् ॥

जयेज्जातीफलेनायंयाजियर्मरसोत्तमः ॥ ३० ॥

टीका—कर्णरोग, मस्तकरोग, पीनस, आधासी-
सी इनमें जायफलसंग ॥ ३० ॥

कन्यकातुलसीतोयमाक्षिकैःसूतिकागदम् ॥
दध्नावातुगवांमूत्रैरतीसारंजयत्ययम् ॥३१॥

टीका—सूतिकारोगमें घीकुमारिका औ तुलसीका रस मधुयुक्त देई. अतीसारमें दहीसें वा गोमूत्रसें ॥ ३१ ॥
तक्रतोयेनवाजातीफलेनांबुरुहेक्षणे ॥ अथ
ग्रामहिषीमूत्रैर्जयेत्संग्रहणीगदम् ॥ ३२ ॥

टीका—संग्रहणीमें छाछि जलसें वा जायफलसें वा भैसीके मूतसें देई ॥ ३२ ॥

कासमर्दरसैर्वापिटंकणेनाग्निमांद्यजित् ॥ त
थाब्राह्मीरसेनायंबुद्धिदोबुद्धिमत्ययम् ॥३३॥

टीका—मंदाग्निमें कसौदीके रसमें वा टकणमें औ ब्राह्मीके रसमें लेनेसें बुद्धि बढाता है ॥ ३३ ॥

तांबूलवीटकेनायंकांतिसंस्कारकोमतः ॥ सु
धाक्षारयुतोऽगुल्मंनिर्गुंडीस्वरसेनवा ॥ ३४ ॥

टीका—पानके बिडेमें लेनेसें शरीरकी कांतिकों क-
रता है. गुल्ममें चुनाकेसंग वा निर्गुंडीके रसमें ॥ ३४ ॥

यवानिकायुतोऽहंतिसन्निपातंसुदारुणम् ॥ वा
तामयमजाक्षीरैरथवागोघृतैश्च ॥ ३५ ॥

टीका—सन्निपातमें अजमायनसम, वातरोगमें व-
करीके दूधसें वा घृतसें ॥ ३५ ॥

सर्ववातामयान्वायंमार्कवस्वरसैर्जयेत् ॥ वा
जमोदाजयायुक्तोवरायुक्तोथवाप्रिये ॥३६॥

टीका—अथवा सर्व वातरोगमें भांगरेके रससें वा
अजमोद ओ भांगसें वा त्रिफलासें ॥ ३६ ॥

वाश्वगंधारजःक्षौद्रसंयुतःसर्ववातजित् ॥ वि
ष्णुक्रांताजटायुक्तोधनुर्वातामयंजयेत् ॥३७॥

टीका—वा असगंध औ मधुकेसाथ लेई. धनुर्वा-
तमें विष्णुक्रांताकी मूलसंग ॥ ३७ ॥

कूष्मांडस्वरसैर्मेहंगोदघ्नावाविनिर्जयेत् ॥ गो
क्षुरकरजोयुक्तोधातुदोषनिवारयेत् ॥ ३८ ॥

टीका—प्रमेहमें भूराकुल्लडाके रससंग, वा गार्दके
दहीसंग, धातुदोषमें गुकरूके चूरनसंग ॥ ३८ ॥

वर्धयेत्सर्पिषाशुक्रं कृच्छ्रं पूगरसैर्जयेत् ॥ रेचा
यैरंडतैलेनविद्रधिं गुडयुक्तथा ॥ ३९ ॥

टीका—घृतसंग खानेसें धातुवृद्धि करे मूत्रकृच्छ्रमें
सुपारीके रससें वा काढेसें वेई. एरंडतेलयुक्त लेनेसें
रेचन होई. गुडसंग लेई तो विद्रधिरोग जाई ॥३९॥

आर्द्रकस्वरसैर्लिप्तोक्षिकस्यविपंजयेत् ॥
स्वेदंभृंगरसेःसार्धंचपानैरेर्विगंधताम् ॥४०॥

टीका—जहां विच्छूनें डंक मारा होई तहां आ-
देके रसमें घसिके लेप करै. पसीना जादा आता होई
तौ भांगरेके रससें लेई. देहकी दुर्गंधि मिटानेकों
चंपाके रससें ॥ ४० ॥

तक्रमेहमजाक्षीरैःपित्तंशिवसितान्वितः ॥ अं
जितोनिंबुतोयेनभूतावेशनिवारणः ॥ ४१ ॥

टीका—तक्रप्रमेहमें वकरीके दूधयुक्त, पित्तरोगमें
आमला शकरसंग. नींबूके रसमें अंजन करनेसें भूत
शरीरमें आया होई तौ जाई ॥ ४१ ॥

त्रिफलोरुबुतैलेनसंजयेदुदरामयान् ॥ काक
माचीरसैर्वापिनात्रकार्याविचारणा ॥ ४२ ॥

टीका—उदरविकासमें त्रिफलाका चूरण और ए-
रडके तेलसंग, अथवा मकोयके रससंग देना ॥ ४२ ॥
मार्कवस्वरसैःशोफंवापलांडुरसैर्जयेत् ॥ करं
जत्वग्रसैरेवंकृमिरोगंनसंशयः ॥ ४३ ॥

टीका—शोफरोगमें भांगरेके रससंग वा पियाजके
रससंग कृमिरोगमें करंजकी छालीके रससंग ॥ ४३ ॥
शक्तिकृन्नवकंजाक्षिनागवल्लीदलांबुना ॥ अ
जाजीक्षौद्रसंयुक्तउष्णवातविघातकः ॥ ४४ ॥

टीका—पानके रसमें लेनेसें शक्ति बढ़ाता है. उ-
ष्णवातमें जीरा औ मधुसंग ॥ ४४ ॥

वीटकेनयुतःस्वर्यःस्वरजिद्वरकोकिले ॥ आ
मशूलंमुरायुक्तःपामांगोमूत्रलेपितः ॥ ४५ ॥

टीका—स्वरभंगमें पानके बीड़ेके साथ, आमशूल-
में मरोड फलीसग, खाजमें गौमूत्रयुक्त लेप करै ॥ ४५ ॥

लेपितोभक्षितोल्लताविषंभृंगरसान्वितः ॥ त
थापल्लीविषंहंतिभक्षितोलेपितोबुना ॥ ४६ ॥

टीका—लूताके विषमें भांगराके रससें खाई औ
लेपभी करै. छपंकलीके विषमें पानीसें लेप करै औ
खाई ॥ ४६ ॥

उन्मत्तश्वविषंहंतिमेघनादरसैरयम् ॥ गोमू
त्रेणगङ्गुच्यावाकुष्ठंकष्टतरंतथा ॥ ४७ ॥

टीका—उन्मत्त कुत्तेके काटनेसें जो विष होता है
उसमे चौराईके रसयुक्त, कुष्ठमें गोमूत्रसें वा
गिलोयसे ॥ ४७ ॥

नमेरोगोभवेदेवंयस्येच्छास्तिवरांगने ॥ गुटी
मेकांतथाधांप्रत्यहंसेवयेद्विसः ॥ ४८ ॥

टीका—जिसके ऐसी इच्छा होई की, हमारे को-
ई रोग न होई; सो इसकी गोली एक अथवा आधी

नित्य सेवन करै ॥ ४८ ॥ इतिअश्ववर्मरसः ॥

अथाश्विनीकुमारः ॥ त्र्यूषणंफलत्रिकंचनाग
फेनकंविषम् ॥ मागधीजटालवंगदंतिबीज
तालकम् ॥ टंकणंचगंधकं रसंपृथक्पिचुं
प्रिये ॥ क्षीरमर्धप्रस्थकंगवांविशोषयेदये
॥ ४९ ॥ मूत्रकंगवांविशोष्यभृंगराजनीरकं
शोषयेद्विघर्षयन्निरंतरंविबंधयेत् ॥ वाजिमं
थसन्निभांवटीमतीवसुंदरामश्विनीकुमारइत्य
यंरसोवरांगने ॥ ५० ॥

टीका—अथ अश्विनीकुमाररसविधिः. सोंठि, म-
रिच, पीपरि, हरड, वहेडा, आमला, अफीम, वछ-
नाग, पीपरीमूल, लवंग, जमालगोटा, हरिताल,
टंकण, गंधक, पारा, ये १५ औषध एक एक तोला
चूरण करिके बत्तीस तोला गेदुग्धमें खरल करै.
फिरि ३२ तोला गोमूत्रमें. फिरि बत्तीस तोला भां-
गरेके रसमें खरल करिके चना प्रमाण गोली बनावै.
यह अश्विनीकुमार रस है ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अथानुपानं ॥ पित्तमेहनाशनोनिशायु
तोऽश्विनीसुतः कृच्छ्रनाशनोयवानिका.

युतोवरांगने ॥ पुंस्त्वसिद्धयेहिमाक्षिका
 न्वितंनिषेवयेद्विश्वमेषजान्वितंनिषेवयन्
 ज्वरंजयेत् ॥ ५१ ॥

टीका—अथ इसका अनुपान. पित्तप्रमेहमें हल-
 दीसंग ई मूत्रकृच्छ्रकों अजमा इनसंग, नपुंसकपणा
 दूरि करनेकों मधुसंग, ज्वरमें सोंठिसंग ॥ ५१ ॥
 प्रमेहंतुलसीनीरैस्त्वक्कोलेनास्यगंधताम् ॥ उ
 ष्णवातंजयेत्पर्णवीटकेनगणायुजा ॥ ५२ ॥

टीका—प्रमेहमे तुलसीपत्रके रससंग, मुखदुर्गंधमें
 तजसंग, पानके बीडेमें पीपरीयुक्त लेनेसें उष्णवात
 जाई ॥ ५२ ॥

कार्पासस्वरसैःखादन्नरःशीतज्वरंजयेत् ॥ सु
 रसांबुसिताशुंठीयुतएकांतरंज्वरम् ॥ ५३ ॥

टीका—शीतज्वरमें कपासके रससंग, एकांतर
 ज्वरमें तुलसीका रस, शकर, सोंठियुक्त ॥ ५३ ॥

मरिचाजाजितुलसीरसैःस्तार्तीयकंज्वरम् ॥
 भृंगराजरसैरेवजपेच्चातुर्थिकंज्वरम् ॥ ५४ ॥

टीका—तृतीयज्वरमें मरिच, जीरा, तुलसीके रस-
 संग, चातुर्थिकज्वरमें भांगरेके रससंग ॥ ५४ ॥

पिप्पलीमूलसंयुक्तःप्रतिश्यायंमरुद्वथाम् ॥
निंबुनीरैःशिरोरोगेलेपयेच्चापिमक्षयेत् ॥ ५५ ॥

टीका—सरदी लगी होई जिसकों जुषाम कहते हैं उसमें औ वातरोगमें पीपरीमूलसंग, मस्तक-रोगमें नींबूके रससंग खाई. औ लेपभी मस्तकमें करै ॥ ५५ ॥

श्रीहानमुदरंहंतिविशालास्वरसान्वितः ॥ जी
र्णज्वरंसितायुक्तःकाससैंधवसंयुतः ॥ ५६ ॥

टीका—श्रीहा औ उदररोगमें इंद्रायनके रससंग लेई. जीर्णज्वरमें शक्करसंग. कासरोगमें सैंधवल-वणसंग ॥ ५६ ॥

जयेद्वैकक्षदुर्गंधंपीतकस्वरसान्वितः ॥ मंडूक
पर्णिकानीरैर्वृद्धिसंवर्धनोमतः ॥ ५७ ॥

टीका—काखकी दुर्गंधमें बबूलके रससंग, वृद्धि-वृद्धिकेवास्ते ब्राह्मीके रससंग ॥ ५७ ॥

जयेज्जातीफलकाथैरामरक्तातिसारकौ ॥ वा
ताममज्जसंयुक्तःपुष्टिकृद्वलवर्धनः ॥ ५८ ॥

टीका—आमातिसार औ रक्तातिसारमें जायफल-के काढेमें, बदामके मगजसंग पुष्टिकारक औ बल बढ़ानेवाला है ॥ ५८ ॥

हरिद्राघृतसंयुक्तःसूतिकागदनाश-
नः ॥ हीराबोलइतिख्यातस्तेना
पीहविमिश्रितः ॥ ५९ ॥

टीका—सूतिकारोगमें हलदी औ घृतमें औ इस-
में हीराबोलभो मिलावे ॥ ५९ ॥

भंगायुक्तोविशालाक्षिपरपुष्टस्वरप्रदः ॥ श
र्करासंयुतोहन्याज्ज्वरमस्थिगतंप्रिये ॥ ६० ॥

टीका—जो भंगयुक्त लेई तौ कोकिला ऐसा स्वर
होई. हाडमें प्राप्त भए ज्वरमें शर्करासंग ॥ ६० ॥

कदलीकंदनीरेणशूलंकोष्ठगतंजयेत् ॥ अन्य
रोगेषुवैद्येनदेययुक्तयानुपानकैः ॥ ६१ ॥

टीका—कोष्ठगतशूलमें केलेकी जड़के रससंग
और रोगोंमें वैद्य अपनी बुद्धीसे अनुपानयुक्त करे ॥ ६१ ॥

इतिश्रीपंडितरघुनाथप्रसादविरचि
तायामनुपानतरंगिण्यामुपरसानुपा
नकथनेपंचमीवीचिः ॥ ५ ॥

टीका—इतिश्रीवैद्यरसिकविहारोविरचितायामनुपा
नतरंगिणीटीकायां नौकास्यायां पंचमः कोष्ठकः ॥ ५ ॥

॥ अथ स्वादिविधिः ॥

॥ तत्रवज्रविधिः ॥ तस्यजातिभेद

मादौशृणु ॥ वज्रंश्वेतंतथारक्तंपीतं
 ण्णंविदुर्वुधाः ॥ विप्रक्षत्रियविट्शू
 द्राःक्रमाद्वर्णैरिमेमताः ॥ १ ॥

टीका—अथ रत्नादिविधि. तहा हीराकी विधि;
 तिसकी जातिभेद आदिमें सुनौ. श्वेत, रक्त, पीत,
 कृष्ण, ये चारि भेद हीराके हैं; तहां श्वेत ब्राह्मण,
 रक्तवर्ण क्षत्रिय, पीत वैश्य औ काला शूद्र है ॥ १ ॥
 पुंस्त्रीनपुंसकंतत्रविज्ञेयंलक्षणैरपि ॥ वृंताकस
 दृशारेखाविंदुहीनानराःस्मृताः ॥ २ ॥

टीका—तहां पुरुष, स्त्री, नपुंसक इसमें होते हैं;
 उनकों लक्षणोंसे जानना. जौ बैंगनसरीखा होई औ
 रेखा विंदु उसमें न होई सो नर है ॥ २ ॥

रेखाविंदुसमायुक्ताःषट्कोणाःप्रमदामताः
 ॥ त्रिकोणाचिन्हसंयुक्तादीर्घास्तेवैनपुं
 सकाः ॥ ३ ॥

टीका—जो रेखाविंदुसयुक्त छकोणोंका होई सो
 स्त्री है. जो त्रिकोण औ रेखाविंदुयुक्त होई सो नपु-
 सक है ॥ ३ ॥

सर्वेषांपुरुषाःश्रेष्ठाःश्रेष्ठवंशवरांगने ॥ देह
 सिद्धौस्मृतानारीनैवकांतेनपुंसकः ॥ ४ ॥

टीका—सबमें पुरुष श्रेष्ठ है औ देहकी सिद्धिके वास्ते स्त्री चाहिये नपुंसक निरर्थक है ॥ ४ ॥

विप्रोरासायनेराजारोगनाशायकीर्तितः ॥ वै
श्योवादादिसिद्ध्यर्थवयस्तंभायशूद्रकः ॥ ५ ॥

टीका—ब्राह्मण रसायनमें, क्षत्रिय रोगनाशमें,
वैश्य वादादिक सिद्धिकेवास्ते है. आयुष्य दृढ कर-
नेकों शूद्र है ॥ ५ ॥

नारीनार्यप्रदातव्यातथाषण्डायषण्डकः ॥ पुरु
षोबलवानेषसर्वेषांहितकारकः ॥ ६ ॥

टीका—स्त्री स्त्रीकों देना. नपुंसक नपुंसककों. पुरुष
सर्वकों हित है; क्योंकि, यह बलवान है ॥ ६ ॥

अथशोधन ॥ कंटकारीजटाकल्कग
र्भवज्ज्वविपाचयेत् ॥ कुलत्थकोद्रवका
थैदोलायंत्रेदिनत्रयम् ॥ ७ ॥ शुद्धःस्वा
द्वज्जकश्चैनंसर्वकार्येषुयोजयेत् ॥ एवं
वैक्रांतकादीनिरत्नान्येवविशोधयेत् ॥ ८ ॥

टीका—अथ शोधनविधि. भटकटैया जिस भूरि-
गणी कहते हैं उसकी जडकी लुगदीमें धरिके को-
द्रव औ कुलथीके काढमें दोलायंत्रमें तीन दिन पचाव
तौ शुद्ध होई. ऐसेही वैक्रांत आदिक शोधि लेई ॥ ८ ॥

अथमारणं ॥ रामाब्दरूढकार्पासजटांपिष्टा
तदंबुना ॥ नागवल्लिजटांवापितन्नीरेणविपेष
येत् ॥ ९ ॥ तत्कल्कमुद्रितंवज्रंपाचयेद्गजयंत्रके ॥
एवंसप्तपुटैर्वज्रंपंचत्वमुपजायते ॥ १० ॥

टीका—अथ मारण. तीनिवर्षका कपासकी जड़
उसीके रसमें पीसे, अथवा नागवेलिकी जड़ उसीके
रसमें पीसे. उसी कल्कमें संपुट करिके गज-
पुट देई; ऐसे सात पुटमें हीरा मरता है ॥ ९ ॥ १० ॥

अथगुणाः ॥ आयुष्यंसुखदंबल्यंरूपदंरोग
नाशनम् ॥ अपमृत्युहरंप्रोक्तंरत्नंवज्रादिकं
प्रिये ॥ ११ ॥

टीका—अथ गुणाः. आयुष्य बढ़ानेवाला है, सुख
देनेवाला, बल देनेवाला, रूपका देनेवाला, औ रोग-
नाशक है औ वज्रादिक सब अपमृत्युकोभी हर-
नेवाले है ॥ ११ ॥

अथाशुद्धदोषाः ॥ दाहंपांडुगदंकुर्यात्किला
संपार्श्वशूलकम् ॥ वज्रादिकंरत्नगणंरोगजा
लमशुद्धकम् ॥ १२ ॥

टीका—अथ अशुद्धमें दोष. दाह, पांडु, किलाश, पा-
र्श्वशूल, इत्यादि, रोगोंको अशुद्ध वज्रादिक करतेहै १२

अथशांतिः ॥ गोदुग्धेनसितासर्पिर्माक्षिकं
दिनसप्तकम् ॥ पिवेद्वज्रादिरत्नोत्थरोगजा
लप्रशांतये ॥ १३ ॥

टीका—अथ शांति. मधु, घृत, शकर गोदुग्धसं
सात दिन पीवै तौ अशुद्ध रत्नादि दोष शांत होते
हैं ॥ १३ ॥

अथानुपानम् ॥ कुष्ठनुत्खदिरकाथसंयुताव
जभूतिका ॥ माक्षिकार्द्रकनीराढ्यावातव्या
धिप्रणाशिनी ॥ १४ ॥

टीका—अथ अनुपान. हीरेकी भस्म खैरके काढेमें
लेई तौ कुष्ठ जाई. आदेका रस औ मधुसंग लेई
तौ वातरोग जाई ॥ १४ ॥

पिप्पलीमरिचाढ्येनवृपनीरेणसेवितम् ॥ का
संश्वासंकफंहन्याद्वज्रभूतिरसंशयम् ॥ १५ ॥

टीका—पीपरी औ मरीचके चूर्णयुक्त अरुसेके
रसमें लेई तौ कास, श्वास, कफनाश करे ॥ १५ ॥

माक्षिकंघृतसंयुक्तंपुष्टिदंललनेमतम् ॥ सूति
रोगंगवामूत्रैःस्वेदंशर्करयान्वितम् ॥ १६ ॥

टीका—घृत मधुसंग पुष्टिकारक है. गोमूत्रयुक्त
सूतिकारोगकों हरे. शकरसाथ स्वेदकों हरे ॥ १६ ॥

एवमन्यानिरत्नानिदत्वारोगेषुबुद्धितः ॥ अ
नुपानानिसंयोज्यज्ञात्वारोगवलावलम् ॥ १७

टीका—ऐसेही औरभी रत्न, रोगोंमें स्वबुद्धिसँ देइ.
रोगवलावलदेखिके अनुपानयुक्त करै ॥ १७ ॥

अथप्रवालेविशेषः ॥ शोधयेद्वज्रवच्चैनंमारये
च्चापिवज्रवत् ॥ अथवात्वर्कजक्षीरेमारयेत्कौ
कुटेपुटे ॥ १८ ॥

टीका—अथ प्रवालमें विशेष कहते है. शोधन
मारन पूर्ववत् अथवा आंकड़ेके दूधमें कुकुटपुट देई
तौ भस्म होई ॥ १८ ॥

अथानुपानं ॥ कणामाक्षिकाभ्यांलिहेद्यःप्रवा
लंजयेच्छ्वासकासज्वरंजीर्णसंज्ञम् ॥ तथाको
ष्ठगंमारुतंसंजयेतभिषग्दुस्तरांचैवहिकानि
हन्यात् ॥ १९ ॥

टीका—अथ अनुपान. जो मधुपीपरीमें प्रवालकों
सँवै सो श्वास, कास, जीर्णज्वर, कोष्ठगतवात औ
हिकां जीते ॥ १९ ॥

त्तिकृत्तिकशिवाभिश्चज्वरंहंत्येवदारुणम् ॥
पक्करंभाफलेनैवधातुक्षयहरंपरम् ॥ २० ॥

टीका—कुटकी चिरायता हरडयुक्त ज्वर हरे, पके केलाके फलमें धातुक्षयकों हरता है ॥ २० ॥

सितादुग्धयुतंपित्तंगुल्कंदेनउरःक्षतम् ॥ गुल्कंदंमानुषैःख्यातंनतुगीर्वाणभाषया॥२१॥

टीका—दूध शकरसें पित्तकों गुल्कंदमें उरःक्षत रोगके जीते ॥ २१ ॥

नागलतादलवीटकयुक्तंकार्श्यमुरोजघनेविनिहन्यात् ॥ कृच्छ्रहरंत्रिफलामधुयुक्तंतंडुलजैश्वहिमैरथवास्यात् ॥ २२ ॥

टीका—पानके बीडामें दुर्बलताकों हरता है. त्रि-फला मधुयुक्त मूत्रकृच्छ्रकों अथवा चावलके हिम-युक्त मूत्रकृच्छ्रकों हरता है ॥ २२ ॥

धातुपुष्टिकरंकांतेसिताघृतसमन्वितम् ॥ धारोष्णेनचदुग्धेनप्रदरंदारयत्यपि ॥ २३ ॥

टीका—घृत शकरयुक्त धातु पुष्ट करे. धारोष्ण दुग्धयुक्त प्रदर हरे ॥ २३ ॥

मधुशर्करयासुरसास्वरसेर्द्यतिमारुतमाशुकतेतिसुखम् ॥ अयिहंतिनिशांध्यमिदंसुरसासमूषकविड्युतमंजनकम् ॥ २४ ॥

टीका—मधु शकर तुलसीरसयुक्त वातरोग हरै. मू-
सेकी लेंडी याने उंदराकी मींगनी औ तुलसीरसयुक्त
अंजन करनेसें रतौधी हरता है ॥ २४ ॥

सितोपलार्द्रकरसैःपित्तकासहरंपरम् ॥ एव
मन्येपुरोगेषुदातव्यंबुद्धिमत्तरैः ॥ २५ ॥

टीका—मिश्री औ आदेके रसयुक्त पित्तकास हर-
ता है. ऐसे और रोगोंमेंभी बुद्धिवान् वैद्य देवै ॥ २५ ॥

इतिश्रीपंडितरघुनाथप्रसादविरचिता
यामनुपानतरंगिण्यांरत्नानुपानकथने
षष्ठीवीचिः ॥ ६ ॥

टीका—इति श्रीरमणविहारीविरचितायां अनुपानत-
रंगिणीटीकायां नौ • रत्नविधिकथने षष्ठः कोष्ठकः ॥ ६ ॥

॥ अथौषधानुपानानि ॥

तत्रत्रिफलाविधिः ॥ आमलकाभयाक्षास्यु
रैविधभ्रूपक्षैभागिकाः ॥ त्रिफलैषासमारव्या
तासमभागैस्तुवात्रिभिः ॥ १ ॥ भक्षितानि
शिनेत्रार्तिनिहन्यान्मधुसर्पिपा ॥ शर्करासंयु
तामेहंपित्तरोगंधृतान्विता ॥ २ ॥

टीका—अथ औषध अनुपान. तहा त्रिफलाविधि.
आमला ४ चारिभाग, हरड १ एकभाग, बेहेड़ा

२ दोनभाग, इसको विफला कहते हैं. अथवा तीनों समभाग लेना सोई. विफला रात्रिमें घृतमधुयुक्त लेनेसें नेत्ररोगशांति होता है. शकरयुक्त प्रमेहको औ घृतयुक्त पित्तको जीते है ॥ १ ॥ २ ॥

वाततैलान्विताहंतिकफमाक्षिकसंयुता ॥ तद्रसःक्षौद्रसंयुक्तःकामलांजयतिध्रुवम् ॥ ३ ॥

टीका—वातरोगको तैलयुक्त. कफको मधुयुक्त. विफलाका रस मधुयुक्त कामलाको हरता है ॥ ३ ॥

वैडंगेणकषायेणखादिरेणविभावयेत् ॥ पृथक्पृथग्विशालाक्षिभृंगराजांबुनात्रिधा ॥४॥
विशोष्यमासकंसेवेद्वलीपतितनाशनं ॥ सौंदर्यप्राप्तयेऽर्धाब्दमब्दंखादनूयुवाभवेत्॥५॥

टीका—विफलाचूर्णको वायविडंगके काढेमें औ खैरके काढेमें औ भांगरेके रसमें न्यारा न्यारा तीनि तीनि भावना देई. फिरि सुखाडके एक महिना बलानुमान सेवें तो बलीपलितरोग नाश होई. सुंदरता प्राप्तिकेवास्ते छमहिना. एकवर्ष सेवन करे तो वृद्धभी ज्ञान होई ॥ ४ ॥ ५ ॥

अधगुह्यनुपानं ॥ छिन्नाचूर्णतुवासत्वमनु

पानैर्गदंजयेत् ॥ चूर्णटंकात्तिदुकातंसत्वं
लाघमापकम् ॥ ६ ॥

टीका—अथ गिलोदअनुपान. गिलोर्डका सत्व
अथवा चूर्ण अनुपानयुक्त लेनेसें रोग हरता है. चूर्ण
एकटंकसें तोलेभरतक औ सत्व तीनि रतीसें एक
मासापर्यंत बलाबल देखिके लेना ॥ ६ ॥

संजयेत्सितयापित्तंमाक्षिकेणकफामयम् ॥
घृतेनवातजान् रोगान् विवंधंतुगुडेन वै ॥ ७ ॥

टीका—शकरयुक्त पित्तरोग, औ मधुयुक्त कफरोग,
घृतयुक्त वातरोग, गुडयुक्त विवंधकों हरता है ॥ ७ ॥

रुधृतैलेनवातास्त्रंशुं व्याजैवामवातकम् ॥ गु
ल्मचैवौदरंरोगंजयेच्छुं व्येवसत्वरम् ॥ ८ ॥

टीका—एरंडतेलयुक्त वातरक्त, सोंठियुक्त आमवा-
त औ गुल्म औ उदररोग हरै है ॥ ८ ॥

तन्नेणमर्मजंरोगंमाहिपाज्येननेत्ररुक् ॥ श
मंयातितथासर्वेगदाःशीतांनुनाप्रिये ॥ ९ ॥

टीका—छाडियुक्त मर्मस्थानके रोग, मँसके घृ-
तमें नेत्ररोग औ शीतल जलयुक्त सेवन करनेसें
सर्व रोग जाते हैं ॥ ९ ॥

अथसामान्यतःसर्वेपामनुपानानि ॥ अनुपा

२ दोनभाग, इसकों त्रिफला कहते हैं. अथवा तीनों समभाग लेना सोई. त्रिफला रात्रिमें घृतमधुयुक्त लेनेसें नेत्ररोगशांति होता है. शकरयुक्त प्रमेहकों औ घृतयुक्त पित्तकों जीते है ॥ १ ॥ २ ॥

वातंतैलान्विताहंतिकफंमाक्षिकसंयुता ॥ त
द्रसःक्षौद्रसंयुक्तःकामलांजयतिध्रुवम् ॥ ३ ॥

टीका—वातरोगकों तैलयुक्त. कफकों मधुयुक्त. त्रिफलाका रस मधुयुक्त कामलाकों हरता है ॥ ३ ॥

वैडंगेणकषायेणखादिरेणविभावयेत् ॥ पृथ
क्पृथग्विशालाक्षिभृंगराजांबुनात्रिधा ॥४॥
विशोष्यमासकंसेवेद्वलीपतितनाशनं ॥ सौं
दर्यप्राप्तयेऽर्धाब्दमब्दंखादनूयुवाभयेत्॥५॥

टीका—त्रिफलाचूर्णकों वायविडंगके काढेमें औ तैलरके काढेमें औ भांगरेके रसमें न्याग न्यारा ती-
नि तीनि भावना देई. फिरि सुखाडके एक माहिना
बलानुमान सेवें ती वलीपलितरोग नाश होई. सुंद-
रता प्राप्तिकेवास्ते छमाहिना. एकवर्ष सेवन करि ती
वृद्धभी ज्ञान होई ॥ ४ ॥ ५ ॥

अधगृह्यनुपानं ॥ छिन्नाचूर्णंतुवातत्वमनु

पानैर्गदंजयेत् ॥ चूर्णटंकात्तिंदुकातंसत्वं व
लाच्चमापकम् ॥ ६ ॥

टीका—अथ गिलोइअनुपान. गिलोईका सत्व
अथवा चूर्ण अनुपानयुक्त लेनेसें रोग हरता है. चूर्ण
एकटंकसें तोलेभरतक औ सत्व तीनि रतीसें एक
मासापर्यंत बलावल देखिके लेना ॥ ६ ॥

संजयेत्सितयापित्तंमाक्षिकेणकफामयम् ॥
घृतेनवातजान् रोगान् विबंधंतुगुडेन वै ॥ ७ ॥

टीका—शक्कस्युक्त पित्तरोग, औ मधुयुक्त कफरोग,
घृतयुक्त वातरोग, गुडयुक्त विबंधकों हरता है ॥ ७ ॥

रुधुतैलेनवातास्त्रंशुं व्याजैवामवातकम् ॥ गु
ल्मंचैवौदरं रोगं जयेच्छुं व्येवसत्वरम् ॥ ८ ॥

टीका—एरंडतेलयुक्त वातरक्त, सोंठियुक्त आमवा-
त औ गुल्म औ उदररोग हरे है ॥ ८ ॥

तक्त्रेणमर्मजं रोगं माहिपाज्येननेत्ररुक् ॥ श
मं यातितथा सर्वे गदाः शीतांशुनाप्रिये ॥ ९ ॥

टीका—छालियुक्त मर्मस्थानके रोग, भैंसके घृ-
तमें नेत्ररोग औ शीतल जलयुक्त सेवन करनेसें
सर्व रोग जाते हैं ॥ ९ ॥

अथ सामान्यतः सर्वे पामनुपानानि ॥ अनुपा

नमहंवक्ष्येसर्वसाधारणंरुजाम्॥शांत्यैधातूप
धातूनामौषधीनांविचक्षणे ॥ १० ॥

टीका—अथ सामान्यसें सर्व रोगोंमें सर्वौषध अनुपान. हे प्रिये, मैं सर्व रोगोंकी शांतिके वास्ते सर्व धातु, उपधातु और औषधीनका साधारण अनुपान कहता हौं ॥ १० ॥

माक्षिकेणालिहेत्कृष्णाज्वरेचविषमज्वरे ॥ त्रि
दोषेशृंगवेरस्यरसंभाक्षिकसंयुतम् ॥ ११ ॥

टीका—ज्वरमें औ विषमज्वरमें मधुपिप्पली, त्रि-
दोषमें आदेका रस औ मधु ॥ ११ ॥

कटुत्रिकरजोयुक्तंसिंहास्यस्वरसंलिहेत् ॥ का
सश्लेष्मविकारस्यशांतिःस्यान्नवयौवने॥१२॥

टीका—त्रिकटुचूरणयुक्त अरुसेका रस लेई तौ
कास, कफरोग शांति होई ॥ १२ ॥

ज्वरेचपुनरायातेरेणुमेघकिरातकम् ॥ जीर्ण
ज्वरहराश्यामामधुनामधुराधरे ॥ १३ ॥

टीका—जो ज्वर गए पीछे फिरिके आवे तौ
पित्तपापडा, नागरमोथ औ चिरायता देई औ जीर्ण-
ज्वरकों हरनेवाली मधुयुक्त पीपरी है ॥ १३ ॥

तक्रसंग्रहणीरोगेकृमिरोगेविडंगकमे ॥ वह्नि
भलातकौतद्वत्प्रियेऽर्शःसुप्रयोजयेत् ॥ १४॥

टीका—संग्रहणीमें मठा, कृमिरोगमें वायविडंग,
अर्शरोगमें चित्रक औ भिलामा ॥ १४ ॥

पांडुरोगेचमंडूरक्षयेचैवशिलाजतु ॥ भार्ङ्गी
विश्वौपधेश्वासेशूलेहिंयुघृतान्वितम् ॥ १५॥

टीका—पांडुरोगमें मंडूर, क्षयमें शिलाजीत, स्वा-
समें भारंगी औ सोंठि, शूलमें घृतयुक्त हिंग ॥ १५॥

सितायुक्तावरामेहेवानिशावासितामलम् ॥
वृषायामग्निसंतप्तहेमतापितजीवनम् ॥ १६॥

टीका—प्रमेहमें त्रिफलामिश्रीयुक्त अथवा हलदी
अथवा मिश्रीयुक्त आमला, वृषामें तप्तसोनेका बु-
झाया पानी ॥ १६ ॥

लोहनिर्वापितनीरंज्वरेतृष्णासमन्विते ॥ क
रंजोरुचुतैलाढ्यंगोमूत्रंचामवातके ॥ १७॥

टीका—वृषायुक्त ज्वरमें तप्तलोह बुझाया पानी,
आमवातमें करंज औ एरंडतैलयुक्त गोमूत्र ॥ १७ ॥

वराकृष्णारजःक्षीह्निविपेहेमशिरीषकम् ॥ प्र
देयंभिषजानित्यंकासेक्षुद्राकटुत्रिकम् ॥ १८॥

टीका—ह्रीहामें त्रिफला पीपरका चूर्ण, विष खा-
एकौ सोना औ शिरीषका रस. कासमें भूरीगणी
औ त्रिकटु चूर्ण ॥ १८ ॥

वायुरोगेऽनुपानस्याद्यवनेष्टाज्यकौशिकम् ॥
आकलकवचाक्षौद्रैरपस्मारंजयेत्प्रिये ॥ १९ ॥

टीका—वातरोगमें लज्जुन, धी, गुग्गुल, अपस्मा-
रमें अकरकरहा, वच मधुयुक्त देना ॥ १९ ॥

प्रदेयंप्रदरेरोध्रं रेचनंचोदरामये ॥ वातरक्ते
स्मृताच्छिन्नैरंडतेलसमन्विता ॥ २० ॥

टीका—प्रदरमें लोध्र, उदररोगमें रेचन, वातरक्तमें
एरंडतेलयुक्त गिलोय ॥ २० ॥

अर्दितेमाषवटकानवनीतसमन्विताः ॥ मधु
नीरेसमेमेदोगदेशस्तेनसंशयः ॥ २१ ॥

टीका—अर्दितरोगमें उडदके बडे औ माखन,
मेदरोगमें मधु जल समभाग ॥ २१ ॥

अरुचौबीजपूरंवादाडिमंवाप्रदीयताम् ॥ कौ
शिकय्याव्रणेशोकेसुराद्राक्षाम्लपित्तके ॥ २२ ॥

टीका—अरुचीमें बिजौरा वा दाडिम. व्रणमें त्रिफ-
लागुग्गुल. शोकमें मदिरा. अम्लपित्तमें द्राक्षा ॥ २२ ॥

शतावरीचकूप्माडस्वरसोमूत्रकृच्छ्रके ॥ सि
तोपलावराचूर्णेनेत्रातंकेसुपूजितम् ॥ २३ ॥

टीका—शतावरी औ भूराकुल्लडाका रस मूत्रकृ-
च्छ्रमें. नेत्ररोगमें मिश्रीयुक्त त्रिफलाचूर्ण ॥ २३ ॥

अनिद्रेमाहिषंदुग्धमुन्मादेजीर्णकंघृतम् ॥ कु
ष्ठेचखदिरकाथोलाजाश्छर्दिगदेहिताः ॥ २४ ॥

टीका—निद्रा न आती होई तौ भैसीका दूध.
उन्मादमें जीर्ण घृत. कुष्ठमें खैरका काथ. उलटीमें
धानकी लाई ॥ २४ ॥

बालेऽजीर्णगदेनिद्रावाशिवाऽभोजनंजलम् ॥
देयंतीक्ष्णतरंनस्यंगदेजत्रूध्वसंभवे ॥ २५ ॥

टीका—अजीर्णमें निद्रा वा हरड वा लंघन वा
जल. जत्रु कहते है गलेके आगाडी जो हड्डी है
उसकों जो गलेसँ नीचे दोऊ तरफ है उसके ऊपरके
रोगोंमें तीक्ष्ण औपधका नास सुंघना ॥ २५ ॥

मूर्च्छासुशीतलोपायंपार्श्वशूलेतुपौष्करम् ॥
कार्येमांसरसोदुग्धंवात्वश्मर्याशिलाजतु २६

टीका—मूर्च्छामें शीतल उपाय. पशुलीकी शूलमें
दुर्वलताकों मांसका जूस अथवा दूध.
रीमें शिलाजीत ॥ २६ ॥

रसोमूलकपत्राणासूर्यक्षारसमन्वितः ॥ मूत्र
रोधेतुहिक्कायांसितयासहमागधी ॥ २७ ॥

टीका—मूत्ररोधमें मूलेके पत्तेका रस औ तोरा-
खार, हिचकीमें मिश्री ओ पीपरी ॥ २७ ॥

शीतेसर्पलतापत्रस्वरसोमरिचान्वितः ॥ घृ
ततीक्ष्णान्वितोवातेसुरसास्वरसःप्रिये ॥ २८ ॥

टीका—शीतमे नागवेलीके पानका रस औ मरिच
वातमें घृत औ मरिचयुक्त तुलसीका रस ॥ २८ ॥

कविप्रिया ॥ सत्कुलोद्भवप्रभोस्वकीयकंकुला
दिकम् ब्रूहियेनतेपितामहादिकान्जनाःकि
ल ॥ संविदेयुरंबुजाक्षकाव्यकृन्नरोत्तमपृच्छ
तीतवप्रियामयिप्रजेशसत्वरम् ॥ २९ ॥

टीका—अथ काव्यकर्ताका कुलपरपरा वर्णन क-
रते है— तहां कविप्रिया पूछती हे क्री, हे महाराज!
आपका परपरा वर्णन करौ, जिसते आपके पिताम-
हादिकोको लोग जानै ॥ २९ ॥

कविः ॥ अभूद्भागीरथीतीरेकान्यकुब्जोद्वि
जोत्तमः ॥ बालाशर्माहिसुकलःपौंडरीकादि
यज्ञकृत् ॥ ३० ॥

टीका—अथ कवि स्वयं प्रियासैं कहते है, हे व-
रारोहे भागीरथी गंगाजीके किनारे ज्ञातीय कान्य-
कुब्ज ब्राह्मणोत्तम वालाशर्मा सुकल होते भए.
“सुकलका अर्थ अमरकोशमें प्रमाण है सुकलो
दातृभोक्तारि जो आप दानी औ भोगी होई, सो सु-
कल” ऐसे वालाशर्मा औ पौंडरीकादि यज्ञके कर-
नेवाले भए ॥ ३० ॥

वीरेश्वरोऽभवत्तस्यकाशिनाथश्चतत्सुतः ॥ त
दन्वयेऽभवद्वैद्यो धन्वंतरिरिवापरः ॥ ३१ ॥
गोवर्धनइतिख्यातः सदैवारोग्यवर्धनः ॥ ता
पीरामः सुतस्तस्य वैद्यशास्त्रविशारदः ॥ ३२ ॥

टीका—तिनके पुत्र वीरेश्वर भए. तिनके काशिनाथ
भए. तिनके वंशमें गोवर्धनसुकल वैद्य भए, सो जैसे दू-
सरे धन्वंतरी भए. सो सदा आरोग्यके बढ़ानेवाले. तिन-
के तापीराम सुकल वैद्यशास्त्रमें चतुर भए ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

सीतारामोऽभवत्तस्य सर्वशास्त्रविदांवरः ॥ त
त्सुतोऽहंवरारोहे लक्ष्मीमातास्ति मदिता ३३

टीका—तिनके सीताराम सुकल सर्वशास्त्रमें प्रवीण
भए. तिनका मैं पुत्र हौं. मेरी माता लक्ष्मी है; सो
मेरा हितकरनेवाली है ॥ ३३ ॥

रघुनाथप्रसादोऽहंसत्कर्वाद्रसुखप्रदाम् ॥ अ
करवंतवप्रीत्याअनुपानतरंगिणीम् ॥ ३४ ॥

टीका—मेरा नाम रघुनाथप्रसाद हे सो मैंने तु-
मारी प्रीतिकेवास्ते सत्कवियोंके सुख देनेवाली अनु-
पानतरंगिणी करता भया ॥ ३४ ॥

अनुपानजलैःपूर्णास्वच्छनीरैर्यथानदी ॥ सु
समाप्तेयमब्जाक्षिश्रीपतेःसुप्रसादतः ॥ ३५ ॥

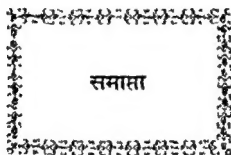
टीका—यह अनुपानरूप जलसे भरीहुई तरंगिणी
नाम ग्रथरूपी नदी हे जैसे स्वच्छ जलसे भरीहुई नदी,
यह तरंगिणी लक्ष्मीनाथकी कृपासे समाप्त भई ॥ ३५ ॥

यत्फलंतरंगिणीकृतेऽस्तिसत्कुलांगने तत्फ
लंरमेशपादपद्मयोःसमर्पितम् ॥ तेनयेजग
द्वितंकरीभवेदियंसदासत्सुपूजिताभिपग्वरे
पुतिष्ठताद्भुवि ॥ ३६ ॥

टीका—जो फल इसतरंगिणीके रचनेसे भया सो
मैंने लक्ष्मीपति नारायणके चरणकमलमें अर्पण किया;
इसरूपके यह अनुपानतरंगिणी जगतके हित करनेवा-
ली होई ओ सदा श्रेष्ठ जनोंमें सराही जाई ओ श्रेष्ठ
वर्षोंमें बहुत काल शृंगारमें स्थित रहे ॥ ३६ ॥

इति श्रीमत्पंडितरघुनाथप्रसादविरचिताया-
मनुपानतरंगिण्यांसप्तमीवीचिः ॥ ७ ॥

टीका—इति श्रीरमणविहारीविरचितायामनुपानत-
रंगिणीटीकायां नौकाख्यायां सप्तमः कोष्ठकः ॥ ७ ॥



पुस्तक मिलनेका ठिकाणाः—

मुंबई—कालकादेवीरोड हरिप्रसाद

भगीरथ पुस्तकालय

मुंबई.

यह पुस्तक पंडित रघुनाथप्रसाद सीताराम
सुकलकाशीस्थने वनाके छपवायाथा सो
हक सहित इनके पाससे लेकर
हरिप्रसादभगीरथ गौडब्राह्मणने
निर्णयसागर छापखानेमें
छपवायाहे.

मुंबई

आवृत्ति ३ री

संवत् १९४६

मन १८६७ का आक्ट २५ प्रमाणे सरकारमे रजिस्टर करके
इस पुस्तकका दब हरिप्रसाद भगीरथ-
जीने आपना रसाहे.